कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय कुरुक्षेत्र

KURUKSHETRA UNIVERSITY KURUKSHETRA

(Established by the State Legislature Act XII of 1956)

('A^{+}' Grade, NAAC Accredited)

3.4.10

Documents for Publications of

Dr. Kamraj Sindhu

on Distance Education at DDE during last five years.

भारतीय संस्कृति के विविध आयाम

(दलित, मीडिया, समाज, नारी)

संपादक

डॉ कामराज सिन्धु (गुरुजी)

भारतीय संस्कृति के विविध आयाम

सम्पादक

डॉ. कामराज सिन्धु

अध्यक्ष हिंदी विभाग

दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

संजय प्रकाशन

नई दिल्ली (भारत)

20. **वैश्विक पर्यावरणीय समस्याओं के समाधानार्थ भारतीय संस्कृति** 203
डॉ. कंचन शर्मा

21. **महिला सशक्तिकरण में सावित्रीबाई फुले की भूमिका** 216
डॉ. कामराज सिन्धु

22. **भारतीय संस्कृति के प्रमुख तत्त्व** 224
डॉ. ऊषा रानी

23. **वाल्मीकि रामायण में सीता वनवास तथा अपहरण** 242
डॉ. कौशल्या देवी

डॉ. कामराज गुरुजी परिचय 252

महिला सशक्तिकरण में सावित्रीबाई फुले की भूमिका

डॉ. कामराज सिन्धु

सावित्रीबाई फुले का जन्म 3 जनवरी 1831 को हुआ था। इनके पिता का नाम खन्दोजी नेवसे और माता का नाम लक्ष्मी था। सावित्रीबाई फुले का विवाह 1840 में ज्योतिबा फुले से हुआ था। सावित्रीबाई फुले भारत के पहले बालिका विद्यालय की पहली प्रिंसिपल और पहले किसान स्कूल की संस्थापक थीं। महात्मा ज्योतिबा को महाराष्ट्र और भारत में सामाजिक सुधार आंदोलन में एक सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में माना जाता है। उनको महिलाओं और दलित जातियों को शिक्षित करने के प्रयासों के लिए जाना जाता है। ज्योतिराव, जो बाद में ज्योतिबा के नाम से जाने गए सावित्रीबाई के संरक्षक, गुरु और समर्थक थे। सावित्रीबाई ने अपने जीवन को एक मिशन की तरह से जीया जिसका उद्देश्य था विधवा विवाह करवाना, छुआछूत मिटाना, महिलाओं की मुक्ति और दलित महिलाओं को शिक्षित बनाना। वे एक कवियत्री भी थीं उन्हें मराठी की आदिकवियत्री के रूप में भी जाना जाता था। वे स्कूल जाती थीं, तो विरोधी लोग पत्थर मारते थे। उन पर गंदगी फेंक देते थे। आज से 160 साल पहले बालिकाओं के लिये जब स्कूल खोलना पाप का काम माना जाता था कितनी सामाजिक मुश्किलों से खोला गया होगा देश में एक अकेला बालिका विद्यालय। और उसके लिए सावित्री बाई फुले ने कितने कष्ट सहे होगें आप अंदाजा लगा सकते हो अब के समय में भी सरकारे कितना प्रचार कर रही हैं नारी शिक्षा पर और हम कितने कामयाब हो रहे हैं। आज भी ग्रामीण लडकियाँ सविधा न मिलने के करण अपनी शिक्षा अधरी छोड़ देती हैं

लेकिन उस समय सावित्री बाई फुले ने देश की लडकियों के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिए और आज उसका नतीजा आप के समक्ष हैं।

सावित्रीबाई पूरे देश की महानायिका हैं। हर बिरादरी और धर्म के लिये उन्होंने काम किया। जब सावित्रीबाई कन्याओं को पढ़ाने के लिए जाती थीं तो रास्ते में लोग उन पर गंदगी, कीचड़, गोबर, विष्ठा तक फैंका करते थे। सावित्रीबाई एक साड़ी अपने थैले में लेकर चलती थीं और स्कूल पहुँच कर गंदी कर दी गई साड़ी बदल लेती थीं। अपने पथ पर चलते रहने की प्रेरणा बहुत अच्छे से देती हैं।

सावित्रीबाई फुले ने 3 जनवरी 1831और 10 मार्च 1897 के संघर्षों पर आज भारतीय स्त्री संगठनों में चर्चा का विषय बना हुआ हैं और गहन आ अध्यन भी चल रहा हैं। लगभग 160 वर्ष पहले सावित्री बाई फुले ने सभी पितृसत्ता और स्त्री विरोधी मान्यताओं को ध्वस्त कर स्त्री मुक्ति की जो परिभाषा रची वह सदियों तक सम्मानित की जाती रहेगी। तमाम भारतीय दलित महिला आंदोलन के साथ-साथ डा अम्बेडकर के लिए भी सावित्री बाई का संघर्ष उनका मार्गदर्शक रहा है। अपने खेत में आम के पेड़ तले जब ज्योतिबा ने उसी पेड़ की एक टहनी से दो कलम बनाकर सावित्रीबाई और अपनी मौसेरी बहन सगुणा बाई को देकर उसी जमीन पर पहला अक्षर लिखने को कहा तब शायद उन्होंने भी नहीं सोचा होगा कि वे भारत में स्त्री शिक्षा की नींव रख रहे है। जब सावित्रीबाई ने उसी आम की टहनी से बनी कलम से जमीन पर पहला अक्षर लिखा तब वे भी कहा जान पायी होंगी कि वे एक अक्षर नहीं बल्कि नया इतिहास लिख रही है। और महिला सशक्तिकरण की नींव डाल रही है जिसका उदहारण आप के समक्ष है। अगर शिक्षा के जगत में जागरूकता आई हैं तो वो नाम है सावित्री बाई फुले जिसे हम अंतर राष्ट्रीय महिला दिवस या शिक्षक दिवस के रूप में मना सकते हैं, तमाम देश की नारी सक्ति को उन पर गर्व होना चाहिए।

सावित्रीबाई ने स्वयं अपनी शिक्षा भी तमाम संघर्षों और पीड़ादायक समय के बाद पूरी की हैं। उस समय पुणे जैसे शहर ब्राहमणवादी मान्यताओं में पूरी तरह जकड़े हुए थे और समाज की मान्यता थी की एक पिछड़े वर्ग की स्त्री का शिक्षा हासिल करना लगभग असंभव ही था। लेकिन 1940 में पुणे में छबीलदास हवेली स्थित ब्रिटिश महिला मिसेज मिशेल द्वारा विशेष रूप से लड़कियों के लिए खोले गये नार्मल स्कूल में पढ़ाई शुरू की। सावित्रीबाई को पढ़ने का बहुत शौक था। उन्होंने उसी दौरान प्रसिद्ध अफ्रीकी अमेरिकन की लेखक टार्मस क्लार्कसन की

जीवनी को पढ़ा, जिसका उनपर गहरा प्रभाव पड़ा। इसी किताब से उन्हें अमेरिका में बसे अफ्रीकी गुलामों के जीवन और संघर्षों की जानकारी मिली, जो भारत में दलितों और स्त्रियों के गुलाम जीवन को समझने में सहायक साबित हुई और आज भी भारतीय दलित समाज उसी गुलामी के संघर्ष को बार बार याद करता हैं आर्यों के बाद जो घटना घटी भारत में उसी का परिणाम हैं शुद्र और जो आज दलित शब्द का रूप बन गया जिसका दंश आज भी 21वीं सदी में समाज भूगत रहा हैं। सावित्रीबाई को ये समझनें में तनिक भी देर नहीं लगी होंगी कि शिक्षा ही गुलामी की जंजीरे तोड़ सकती है। टार्मस क्लार्कसन भी दूनिया भर में अपनी बात प्रभावी रूप से इसी लिए पहुंचा पाये क्योंकि वे शिक्षित थे और में भी अपनी बात को शिक्षा के द्वारा ही समज में मजबूती के साथ रख सकूँ।

फुले दंपत्ति ने एक जनवरी 1848 में पुणे की भिड़ेवाडी में लड़कियों के लिए पहला स्कूल खोला। इसी स्कूल से सावित्री बाई और सगुणाबाई ने अध्यापन का काम शुरू कर भारत की पहली महिला अध्यापिका होने का गौरव हासिल किया। फुले दंपत्ति यह अच्छी तरह से जानते थे कि शिक्षा ही विकास के रास्ते खोल न्याय का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। शिक्षित स्त्री पुरुष प्रधान समाज को संघर्ष की राह पर चला सकते हैं और दिशा भी दे सकते है। स्त्री के साथ साथ दलितों के लिए भी शिक्षा जरूरी है। इसी को ध्यान में रखकर 15 मई 1848 को उन्होंने पुणे की एक दलित बस्ती में स्कूल खोला, जहां दलित लड़के लड़कियां पढ़ने लगे। इस स्कूल में पढ़ाने के लिए जब कोई अध्यापक नहीं मिला तब सावित्री बाई और सगुणा बाई ने वहां भी पढ़ाना शुरू किया। गरीब, दलित और स्त्री की मुफ्त शिक्षा के लिए फुले दम्पति की प्रतिबद्धता इतनी अधिक थी कि एक जनवरी 1848 से 15 मार्च 1852 तक मात्र चार वर्षों में उन्होंने पुणे और उसके आस-पास 18 स्कूल खोले। सामाजिक और आर्थिक, हालात से लड़ते हुए उन्होंने अपने इस मिशन को जीवन भर जारी रखा।और अपना पूरा जीवन समाज को समर्पित कर दिया जिसका परिणाम आप के समक्ष हैं।

सावित्री बाई और ज्योतिबा ने शूद्रो अति शूद्रों के अलावा अल्प संख्यक वर्ग के स्त्री पुरुषों की शिक्षा को भी जरूरी माना और फातिमा शेख जो उनके ही स्कूल की छात्रा थी, उसे अपने एक स्कूल में अध्यापिका बनाकर देश की पहली मुसलमान अध्यापिका होने का गौरव प्रदान किया। फातिमा शेख फुले दंपत्ति के आंदोलन की एक महत्त्वपूर्ण स्त्री नेतृत्व के रूप में जानी जाती है। परिवर्तन और सामाजिक न्याय में धर्मनिरपेक्ष सोच का भी शामिल होना जरूरी है यह लड़ाई तभी

सफल होगी जब सभी जाति और धर्म की स्त्री शिक्षित होगी। जब तक जिंदा रही सावित्री बाई इसी विचार के साथ मजबूती से जुड़ी रही और इसके लिए बराबर स्त्री विरोधी ताकतों से लड़ती रही।

आजादी के 70 सालों बाद और शिक्षा के अधिकार को सभी भारतीयों के बुनियादी हक के रूप में स्वीकार करने के बाद भी दलित, आदिवासी, पिछड़ी और अल्पसंख्यक वर्गों की महिलाओं की शिक्षा में भारी कमी दिखाई देती है। आज लगभग 68 प्रतिशत दलित महिला अशिक्षित है, जो हर क्षेत्र में पिछड़ी दिखाई देती है। दलित आदिवासी पिछड़ी और अल्पसंख्यक महिला की पंचायत से संसद तक में भागीदारी की जरूरत है, जो बड़े संघर्ष के बगैर संभव नहीं। महिला आरक्षण बिल पर विवाद अभी भी जारी है। अभी हाल ही भाजपा शासित राजस्थान और हरियाणा सरकार ने एक प्रस्ताव पारित कर केवल मैट्रिक पास स्त्री पुरुषों को ही चुनाव लड़ने की इजाजत दी है। लेकिन ये प्रस्ताव केवल पंचायत में लागू किया है विधान सभा और लोक सभा में अभी भी ये प्रस्ताव लागू नहीं हुआ है। अशिक्षित उमीदवार विधान सभा और लोक सभा में न जाये ऐसा भी कानून बने। देश भर में तेजी से उभरते उग्र हिन्दुत्ववादी विचारधारा का दायरा आज निस्संदेह बढ़ा है, लेकिन फुले अम्बेडकरवादी चिंतन भारतीय प्रगतिशील दलित और महिला आंदोलन में सभी जगह प्रमुखता से मौजूद है, उसका नेतृत्व कर रहा है। इस पर जवलन्त चर्चा भी हो रही है। सावित्रीबाई के संघर्ष, उनका स्त्रीवादी चिंतन स्त्री संघर्षों के लिए अब और आने वाले समय की सबसे बड़ी जरूरत है।

सावित्रीबाई फुले भारत के पहले बालिका विद्यालय की पहली प्रिंसिपल और पहले किसान स्कूल की संस्थापक थीं। महात्मा ज्योतिबा को महाराष्ट्र और भारत में सामाजिक सुधार आंदोलन में एक सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में माना जाता है। उनको महिलाओं और दलित जातियों को शिक्षित करने के प्रयासों के लिए जाना जाता है। ज्योतिराव, जो बाद में ज्योतिबा के नाम से जाने गए सावित्रीबाई के संरक्षक, गुरु और समर्थक थे। सावित्रीबाई ने अपने जीवन को एक मिशन की तरह से जीया जिसका उद्देश्य था विधवा विवाह को मन्यता देना और छुआछूत मिटाना, महिलाओं की मुक्ति और दलित महिलाओं को शिक्षित बनाना यही उनका लक्ष्य था। वे एक कवियत्री भी थीं उन्हें मराठी की आदि कवियत्री के रूप में भी जाना जाता था। आज से 160 साल पहले बालिकाओं के लिये जब स्कूल खोलना पाप का काम माना जाता था कितनी सामाजिक मुश्किलों से खोला गया होगा देश में एक अकेला बालिका विद्यालय। सावित्रीबाई पूरे देश की

महिलाओं के लिए महानायिका के रूप में जनि जाती रही हैं। हर जाति और धर्म के लिए उन्होंने काम किया। जब सावित्रीबाई कन्याओं को पढ़ाने के लिए जाती थीं तो रास्ते में लोग उन पर गंदगी, कीचड़, गोबर, विष्ठा तक फैंका करते थे। सावित्रीबाई एक साड़ी अपने थैले में लेकर चलती थीं और स्कूल पहुँच कर गंदी कर दी गई साड़ी बदल लेती थीं। अपने पथ पर चलते रहने की प्रेरणा बहुत अच्छे से देती हैं।

मौलिक रूप से हमारा समाज एक पुरुष प्रधान समाज रहा है। महिलाओं को हमेशा यहां दोयम दर्जे का स्थान ही प्रदान किया गया है। पहले महिलाओं के पास किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता ना होने के कारण उनकी सामाजिक और पारिवारिक स्थिति एक पराश्रित से अधिक और कुछ नहीं थी, जिसे हर कदम पर एक पुरुष के सहारे की जरूरत पड़ती थी। वैसे तो आजादी के बाद से ही महिला उत्थान के उद्देश्य से विभिन्न प्रयास किए जाते रहे हैं। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में महिला सशक्तिकरण की बयार में अत्याधिक तेजी देखी गई है। इन्हीं प्रयासों के परिणामस्वरूप महिलाओं के आत्मविश्वास में कई गुणा बढ़ोतरी हुई है और वे किसी भी चुनौती को स्वीकार करने के लिए खुद को तैयार करने लगी हैं। जहां सरकारें महिला उत्थान के उद्देश्य से नई-नई योजनाएँ बनाने लगी हैं, वहीं कई गैर-सरकारी संगठन भी उनके अधिकारों के लिए अपनी आवाज बुलंद करने लगे हैं। नारी सशक्तिकरण के तहत महिलाओं के भीतर ऐसी प्रबल भावना को उजागर करने का प्रयास भी किया जा रहा है कि वह अपने भीतर छिपी ताकत को सही मायने में उजागर कर, बिना किसी सहारे के आने वाली हर चुनौती का सामना कर सकें।

आज की महिलाएँ सिर्फ घर गृहस्थी को सँभालने तक ही सीमित नहीं रही हैं, बल्कि हर क्षेत्र में उन्होंने अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी है। व्यावसायिक क्षेत्र हो या पारिवारिक, महिलाओं ने यह साबित कर दिया है कि वे हर वो काम कर सकती हैं जो कभी पुरुषों के योग्य समझा जाता था। कुछ समय पहले तक जिन व्यवासायिक क्षेत्रों में केवल पुरुषों का ही वर्चस्व हुआ करता था, अब वहां महिलाओं को काम करते देखकर हमें आश्चर्य नहीं होता है। शिक्षा और आत्म-निर्भर बन जाने के कारण वह अपने ऊपर विश्वास कर, अपने जीवन संबंधी निर्णय लेने लगी हैं।

लेकिन नारी सशक्तिकरण की पैरवी करते हुए हम इस बात को नकार नहीं सकते कि जब हम किसी एक को सशक्त करने की बात करते हैं तो स्वाभाविक

तौर पर हम दूसरे व्यक्ति के अधिकार क्षेत्र को सीमित कर रहे होते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए जरूरी है कि पुरुष वर्चस्व की महत्ता को कम कर दिया जाए। ऐसे हालातों में भारतीय पुरुष जो महिलाओं का दमन-शोषण करना अपना शौक समझते थे, वह इस बात को वहन नहीं कर पा रहे कि दबी-कुचली महिलाएँ अपने अधिकारों के लिए आवाज उठा रही है। यहीं कारण है कि महिला सशक्तिकरण को बहुत अधिक तरजीह दिए जाने के बावजूद पुरुष वर्ग में एक तबका ऐसा भी है जो महिलाओं की आजादी को अपने लिए घातक मानकर चल रहा है। अपने झूठे पुरुषत्व को कायम रखने और महिलाओं को उनसे निम्न होने का अहसास दिलवाने के लिए वह कभी उसके सम्मान के साथ खिलवाड़ करता है तो कभी उस पर हाथ उठाता है।

हम बड़े गर्व के साथ सरकारों द्वारा बनाई जा रही योजनाओं को अपना लेते हैं। लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि महिलाओं के लिए बनाई गई विभिन्न योजनाएँ उन्हें अधीनस्थ और शोषित होने का ही अहसास दिलवाती हैं। घरेलू हिंसा को रोकने और स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने जैसे कानून हमारे समाज की इसी कड़वी हकीकत को बयान करते हैं कि समय परिवर्तित हो जाने के बाद भी पुरुष आज भी स्वयं को महिलाओं को सम्मान देना पसंद नहीं करते। उनकी मानसिकता आज भी पहले जैसी ही है। विवाह के तुरंत बाद ही उसे अपनी पत्नी के साथ मारपीट करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। बेटी को शादी के बाद दूसरे घर ही जाना है तो उसे पढ़ा-लिखा कर खर्चा क्यों किया जाए। लेकिन जब सरकार उन्हें लालच देती है, तो वह उसे पढ़ाने के लिए भी तैयार हो जाते हैं और हम यह समझने लगते है कि परिवारों की मानसिकता बदल रही हैं?

दुर्भाग्यवश नारी सशक्तिकरण केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सिमटकर रह गया है। एक ओर बड़े-बड़े शहरों और महानगरों में रहने वाली महिलाएँ शिक्षित, आर्थिक रूप से स्वतंत्र, विभिन्न क्षेत्रों में ऊंचे पदों पर काम करने वाली और आधुनिक विचारधारा रखने वाली महिलाएँ हैं, जो पुरुषों के दमन को किसी भी रूप में सहन नहीं करना चाहतीं। अपने साथ हो रहे अत्याचारों के विरुद्ध वह अपने दम पर लड़ना जानती हैं। इनकी संख्या भले ही कम हो, लेकिन उन्होंने जो सम्मानजनक स्थिति प्राप्त की है, वह बेहद प्रशंसनीय है। वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण इलाकों में तो आज भी नारी के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न ही लगा हुआ है। गांवों में रहने वाली महिलाएँ ना तो अपने अधिकारों को जानती हैं और ना ही

उनके महत्त्व को समझती हैं। जिस कारण वह पति के अत्याचारों और सामाजिक लांक्षनों को अपनी नियति समझकर सहन करने को विवश हो जाती हैं।

हमारा पुरुष प्रधान समाज जिन संस्कारों, परंपराओं और मर्यादाओं की दुहाई देकर महिलाओं को अपने द्वारा निर्मित दायरे में बांध कर रखना चाहता हैं, पुरुष द्वारा उन्हीं सीमाओं का अतिक्रमण और अवमानना कोई नई बात नहीं है। खास बात तो यह है कि उसे ऐसे कृत्य के लिए कोई ठोस सजा नहीं दी जाती। वहीं अगर कोई महिला इन बंधनों को तोड़ कर बाहर निकलना चाहे तो उसे हमारे समाज के ठेकेदारों की कोप दृष्टि का पात्र बनना पड़ता है। हम भले ही खुद को आधुनिक कहने लगे हों, लेकिन वास्तविकता यही है कि आधुनिकता केवल हमारे पहनावे और व्यवहार में आई है लेकिन चरित्र और विचारों से अभी भी हमारा समाज और इसमें रहने वाले लोग पिछड़े हुए ही हैं। पुरुष वर्ग महिलाओं को आज भी एक वस्तु की भांति अपने अधीन बनाए रखना चाहता है। आज महिलाएँ गृहणी से लेकर एक सफल व्यावसायी की भूमिका को सहज ढंग से निभा रही हैं। वह स्वयं को पुरुषों से बेहतर साबित करने का एक भी मौका गंवाना नहीं चाहती। अगर वह खुद में छिपी ताकत को पहचान अपना पृथक और स्वतंत्र अस्तित्व निर्माण करने का प्रयास करती है तो वह पुरुषों से ज्यादा बेहतर निर्णय लेने की भी काबिलियत रखती हैं। आधुनिक युग की महिलाएँ पुरुष के समकक्ष ही नहीं, बल्कि कई क्षेत्रों में तो पुरुष के वर्चस्व को भी चुनौती दे रही हैं। अपनी मेहनत और काबिलियत के बल पर उन्होंने अपनी एक अलग पहचान बनाई है। ये सब सावित्री बाई फुले के प्रयासों का प्रतिफल है जो आज भारतीय समाज में महिलाओं का को उदमी के रूप में देखा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. डॉ. राजकुमार नारी के बदले आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस
2. भारतीय संविधान, अनु0 14, 15, 16, 19, 21, 23, 39
3. कमलेश कुमार गुप्ता, महिला सशक्तिकरण, बुक एनक्लेव, जयपुर
4. सिंह करण बहादुर, महिला अधिकार व सशक्तिकरण,
5. सुरेश लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र
6. हरेन्द्र राज गौतम, महिला अधिकार संरक्षण, कुरूक्षेत्र
7. जय प्रकाश व्यास, नारी शोषण, ज्ञानदा प्रकाशन
8. शैलजा नागेन्द्र, वोमेन्स राइट्स, ए डी वी पब्लिशर्स जयपुर
9. आहुजा, राम भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत प्रकाशन जयपुर, नई दिल्ली

10. अल्टेकर, ए0एस0 द पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दु सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसी लाल, वाराणसी
11. नदीम हसनैन, समकालीन भारतीय समाज, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ।
12. पुष्पा जोशी, गांधी आन वोमन, सेन्टर फार वोमन'स डेवलपमेन्ट स्टडीज, दिल्ली
13. जयशंकर मिश्र प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना
14. श्रीनिवास, एम0एन0 द चेन्जिग पोजीशन ऑफ इण्डिया वूमन, आक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे
15. डॉ. राजनारायण, स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलना

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी की भूमिका

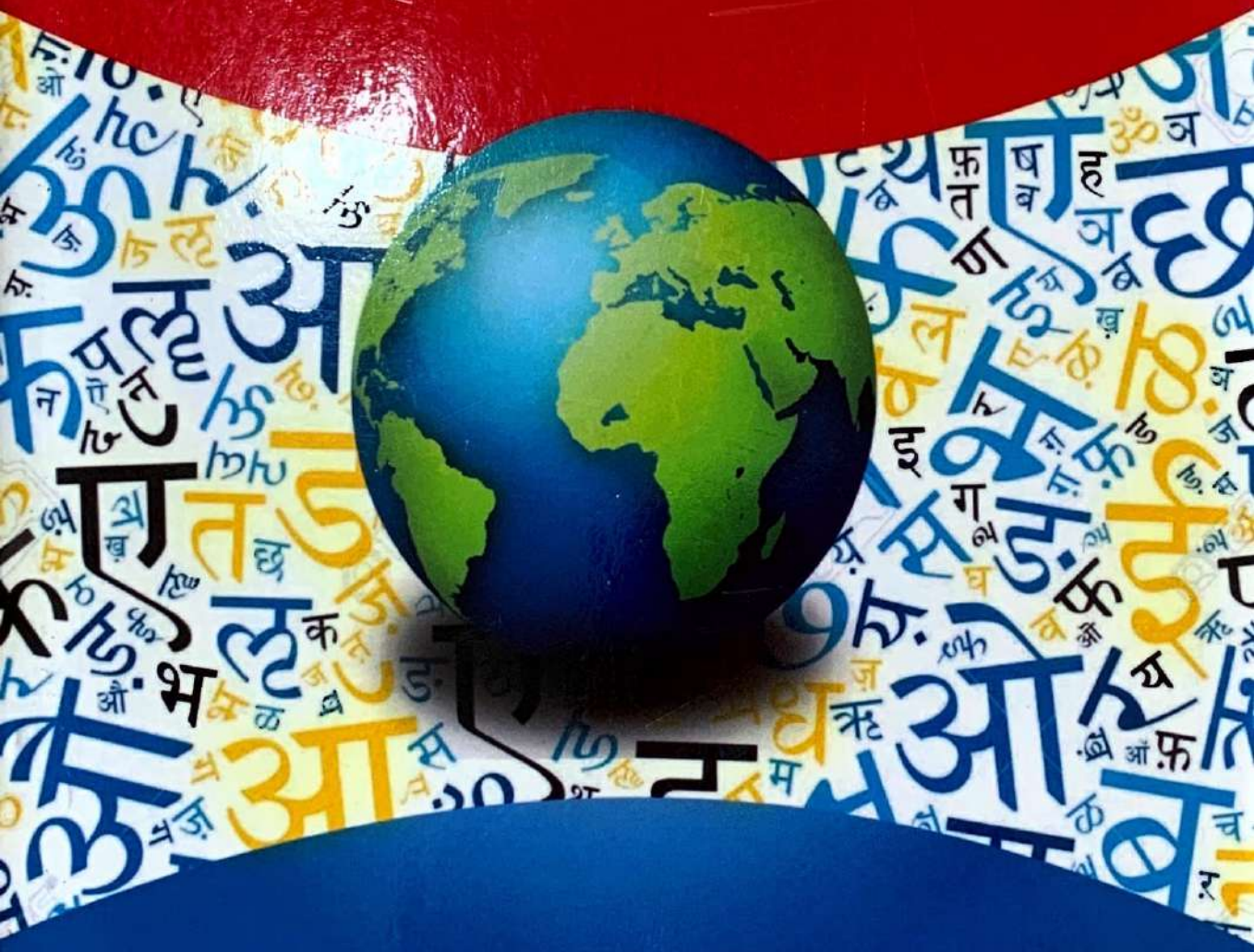

संपादक

डॉ. कामराज सिंधु (गुरु जी)

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी की भूमिका

संपादक

डॉ. कामराज सिंधु (गुरुजी)

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय

कुरुक्षेत्र

संजय प्रकाशन

नई दिल्ली (भारत)

17. वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी : विस्तार और चुनौतियाँ / डॉ. (श्रीमती सुनीता वर्मा) 106
18. हिन्दी का वैश्विक स्वरूप / डॉ. गुरनाम सिंह 114
19. हिन्दी भाषा का बदलता स्वरूप / डॉ. आशा देवी 121
20. हिन्दी के विकास में हिन्दी पत्रकारिता का योगदान / डॉ. बिजेन्द्र कुमार 127
21. हिन्दी भाषा : कल आज और कल / डॉ. शर्मिला यादव 135
22. संयुक्त राष्ट्र संघ और हिन्दी / डॉ. सुरेश कुमार 140
23. वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिन्दी : विस्तार एवं चुनौतियाँ / दीप्ति 146
24. वैश्विक स्तर पर हिन्दी साहित्य का प्रचार प्रसार / डॉ. कामराज सिंधु (गुरुजी) 151

वैश्विक स्तर पर हिन्दी साहित्य का प्रचार प्रसार

–डॉ. कामराज सिंधु (गुरुजी)

इक्कीसवीं सदी बीसवीं शताब्दी से भी ज्यादा तीव्र परिवर्तनों वाली तथा चमत्कारिक उपलब्धियों वाली शताब्दी सिद्ध हो रही है। आज पूरे विश्व में हिन्दी की अपनी पहचान है। अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश का कथन इस बात को प्रमाणित करता है कि 'हिन्दी इक्कीसवीं सदी की विश्व की भाषा' बन सकती है और इसको लेकर सार्थक प्रयास भी किये जा रहे हैं। आज दुनिया का कौन-सा कोना है, जहाँ भारतीय न हों और हिन्दी ना हो। हिन्दी केवल भारत की राष्ट्रभाषा ही नहीं रह गई, बल्कि जब इसे संविधान में भारत की राजभाषा के रूप में भी स्वीकृत किया गया तो स्वभावतः ऐसा माना जाने लगा कि इसे देर-सबेर संयुक्त राष्ट्र संघ एवं संसार की अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में भी स्थान मिल जाएगा और अंतर्राष्ट्रीय संपर्क की भाषा के रूप में इसे भी धीरे धीरे स्वतः मान्यता प्राप्त होगी। लेकिन जिन कारणों से भारत को संयुक्त राष्ट्र संघ में या विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में स्थायी या विशेष महत्त्व नहीं प्राप्त हो सका, करीब-करीब उन्हीं कारणों से भारत की राजभाषा हिन्दी को भी वह स्थान नहीं प्राप्त हो सका। इसी पृष्ठ भूमि और इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर प्रथम एवं द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को मान्यता दिलाने के साथ-साथ विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना की और इस बात को भी सर्वसम्मत प्रस्ताव के रूप में स्वीकृत किया गया था। द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी सिखाने के लिए विश्व हिन्दी विद्यापीठ के रूप में वर्धा में एक संस्था की स्थापना की जा चुकी है। लेकिन अभी तक इसे केंद्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त

नहीं हो सकी है। परंतु संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को व्यवहार में लाए जाने के लिए इतना ही काफी नहीं है। इसीलिए दिल्ली में विश्व हिन्दी विद्यापीठ के एक केंद्र की स्थापना की योजना केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय के सामने प्रस्तुत की गई है। अतः हमें संसार के भी राष्ट्रों से उनकी भाषा के माध्यम से संपर्क स्थापित करने के लिए ठोस कदम उठाना होगा। विश्व हिन्दी विद्यापीठ के माध्यम से ऐसा करने संभव होगा। आज हिन्दी विश्व स्तर पर एक प्रभावशाली भाषा बनकर उभरी है। आज विदेशों में अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है। ज्ञान-विज्ञान की पुस्तकें बड़े पैमाने पर हिन्दी में लिखी जा रही है। सोशल मीडिया और संचार माध्यमों में हिन्दी का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। हिन्दी विश्व के सर्वाधिक आबादी वाले दूसरे देश भारत की प्रमुख भाषा है तथा फारसी लिपि में लिखी जाने वाली भाषा उर्दू हिन्दी की ही एक अन्य शैली है। लिखने की बात छोड़ दें तो हिन्दी और उर्दू में कोई विशेष अंतर नहीं रह जाता सिवाय इसके कि उर्दू में अरबी, फारसी, तुर्की आदि शब्दों का बहुलता से इस्तेमाल होता है। एक ही भाषा के दो रूपों को हिन्दी और उर्दू, अलग-अलग नाम देना अंग्रेजों की कूटनीति का एक हिस्सा था।

आज चालीस से अधिक देशों में 600 से अधिक विश्वविद्यालयों और स्कूलों में हिन्दी पढ़ाई जा रही हैं। भारत से बाहर जिन देशों में हिन्दी का बोलने, लिखने-पढ़ने तथा अध्ययन और अध्यापन की दृष्टि से प्रयोग होता है, उन्हें हम इन वर्गों में बांट सकते हैं–जहाँ भारतीय मूल के लोग अधिक संख्या में रहते हैं, जैसे–पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बंगलादेश, म्यांमार, श्रीलंका और मालदीव आदि। भारतीय संस्कृति से प्रभावित दक्षिण पूर्वी एशियाई देश, जैसे-इंडोनेशिया, मलेशया, थाईलैंड, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा जापान आदि। जहाँ हिन्दी को विश्व की आधुनिक भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा और यूरोप आदि। अरब और अन्य इस्लामी देश, जैसे–संयुक्त अरब अमीरात (दुबई) अफगानिस्तान, कतर, मिस्र, उजबेकिस्तान, कजाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान आदि। हिन्दी विश्व के प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण देशों के विश्व विद्यालयों में अध्ययन अध्यापन में भागीदार है। अकेले अमेरिका में ही लगभग एक सौ पचास से ज्यादा शैक्षणिक संस्थानों में हिन्दी का पठन-पाठन हो रहा है। आज जब 21वीं सदी में वैश्वीकरण के दबावों के चलते विश्व की तमाम संस्कृतियाँ एवं भाषाएँ आदान-प्रदान व संवाद की प्रक्रिया से गुजर रही हैं तो हिन्दी इस दिशा में विश्व मनुष्यता को निकट लाने के लिए सेतु का कार्य कर सकती है। उसके पास पहले से ही बहु

सांस्कृतिक परिवेश में सक्रिय रहने का अनुभव है जिससे वह अपेक्षाकृत ज्यादा रचनात्मक भूमिका निभाने की स्थिति में है। जहाँ तक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विनिमय के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग का सवाल है तो यह देखने में आया है कि हमारे देश के नेताओं ने समय-समय पर अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर हिन्दी में भाषण देकर उसकी उपयोगिता का उद्घोष किया है।अभी हाल में देश के प्रधान मंत्री माननीय नरेंद्र मोदी जी ने अमेरिका में अपना वक्त हिन्दी में दिया और इससे पहले भी देश के अन्य प्रधान मंत्री हिन्दी में भाषण दे चुके हैं जिसमें अटल बिहारी वाजपेयी तथा पी.वी. नरसिंहराव द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी में दिया गया वक्तव्य स्मरणीय है तो श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा राष्ट्र मंडल देशों की बैठक तथा चन्द्रशेखर द्वारा दक्षेस शिखर सम्मेलन के अवसर पर हिन्दी में दिए गए भाषण भी उल्लेखनीय हैं। यह भी सर्वविदित है कि यूनेस्को के बहुत सारे कार्य हिन्दी में सम्पन्न होते हैं। इसके अलावा अब तक विश्व हिन्दी सम्मेलन मॉरीशस, त्रिनिदाद, लंदन, सुरीनाम तथा न्यूयार्क जैसे स्थलों पर सम्पन्न हो चुके हैं जिनके माध्यम से विश्व स्तर पर हिन्दी का स्वर सम्भार महसूस किया जा रहा है। आठवें विश्व हिन्दी सम्मेलन न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव बान की मून ने दो-चार वाक्य हिन्दी में बोलकर उपस्थित विश्व हिन्दी समुदाय की खूब वाह-वाही लूटी। हिन्दी को वैश्विक संदर्भ और व्याप्ति प्रदान करने में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा विदेशों में स्थापित भारतीय विद्यापीठों की केन्द्रीय भूमिका रही है जो विश्व के अनेक महत्त्वपूर्ण राष्ट्रों में फैली हुई है। इन विश्वविद्यालयों में शोध स्तर पर हिन्दी अध्ययन अध्यापन की सुविधा है जिसका सर्वाधिक लाभ विदेशी अध्येताओं को मिल रहा है। आप सब को ताजा जानकारी होंगी कि हाल ही में कनाडा में हिन्दी साहित्य रथ यात्रा निकली गई जिसका संचालन प्रो सरन घई जी ने किया और यह यात्रा कनाडा में पहली बार निकली गई है।

आज हिन्दी विश्व स्तर पर एक प्रभावशाली भाषा बनकर उभरी है और जितना अधिक हम हिन्दी और प्रांतीय भाषाओं का प्रयोग शिक्षा, ज्ञान विज्ञान, प्रौद्योगिकी आदि में करेंगे, उतनी ही तेज गति से भारत का विकास होगा। हिन्दी को राष्ट्रीय स्वाभिमान का अंग एवं प्रेरणा स्रोत के रूप में सर्वाधिक उपयुक्त समझते हुए भारतीय संविधान सभा द्वारा 14 सितंबर, 1949 को हिन्दी को भारत-संघ की राजभाषा के रूप में अंगीकार किया गया। इसी अनुक्रम में 26 जनवरी, 1950 में लागू भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार यह

व्यवस्था की गई कि संघ सरकार की राजभाषा हिन्दी होगी एवं इसकी लिपि देवनागरी होगी। जिस भारत भूमि में योग, सांख्य-दर्शन, दशमलव-प्रणाली, ज्योतिष-विज्ञान, ग्रह-नक्षत्रों की दूरी और काल की गणना जैसे ज्ञान से परिपूर्ण विषयों पर उत्कृष्ट साहित्य का सृजन हुआ हो, उस देश की भाषाओं की जड़ें कितनी गहरी और समृद्ध।

वैश्विक स्तर पर हिन्दी का विकास

जब हम उपर्युक्त प्रतिमानों पर हिन्दी का परीक्षण करते हैं तो पाते हैं कि वह न्यूनाधिक मात्रा में प्रायः सभी निष्कर्षों पर खरी उतरती है। आज वह विश्व के सभी महाद्वीपों तथा महत्त्वपूर्ण राष्ट्रों–जिनकी संख्या लगभग एक सौ चालीस है–में किसी-न-किसी रूप में प्रयुक्त होती है। वह विश्व के विराट फलक पर नवल चित्र के समान प्रकट हो रही है। आज वह बोलने वालों की संख्या के आधार पर चीनी के बाद विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा बन गई है। इस बात को सर्वप्रथम सन 1999 में 'मशीन ट्रांसलेशन समिट' अर्थात् यांत्रिक अनुवाद नामक संगोष्ठी में टोकियो विश्वविद्यालय के प्रो. होजुमि तनाका ने भाषाई आँकडे पेश करके सिद्ध किया है। उनके द्वारा प्रस्तुत आँकड़ों के अनुसार विश्वभर में चीनी भाषा बोलने वालों का स्थान प्रथम और हिन्दी का द्वितीय है। अंग्रेजी तो तीसरे क्रमांक पर पहुँच गई है। इसी क्रम में कुछ ऐसे विद्वान अनुसंधित्सु भी सक्रिय हैं जो हिन्दी को चीनी के ऊपर अर्थात् प्रथम क्रमांक पर दिखाने के लिए प्रयत्नशील हैं। डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल ने भाषा शोध अध्ययन 2005 के हवाले से लिखा है कि, विश्व में हिन्दी जानने वालों की संख्या एक अरब दो करोड पच्चीस लाख दस हजार तीन सौ बावन (1, 02, 25, 10, 352) है जबकि चीनी बोलने वालों की संख्या केवल नब्बे करोड चार लाख छह हजार छह सौ चौदह (90, 0४, 06, 61४) है। यदि यह मान भी लिया जाय कि आँकडे झूठ बोलते हैं और उन पर आँख मूँदकर विश्वास नहीं किया जा सकता तो भी इतनी सच्चाई निर्विवाद है कि हिन्दी बोलने वालों की संख्या के आधार पर विश्व की दो सबसे बड़ी भाषाओं में से है। लेकिन वैज्ञानिकता का तकाजा यह भी है कि हम इस तथ्य को भी स्वीकार करें कि अंग्रेजी के प्रयोक्ता विश्व के सबसे ज्यादा देशों में फैले हुए हैं। वह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रशासनिक, व्यावसायिक तथा वैचारिक गतिविधियों को चलाने वाली सबसे प्रभावशाली भाषा बनी हुई है। चूंकि हिन्दी का संवेदनात्मक साहित्य उच्चकोटि का होते हुए भी ज्ञान का साहित्य अंग्रेजी के स्तर का नहीं है अतः निकट भविष्य में विश्व व्यवस्था परिचालन की दृष्टि से

अंग्रेजी की उपादेयता एवं महत्त्व को कोई खतरा नहीं है। इस मोर्चे पर हिन्दी का बड़े ही सबल तरीके से उन्नयन करना होगा। उसके पक्ष में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आज अंग्रेजी के बाद वह विश्व के सबसे ज्यादा देशों में व्यवहृत होती है।

डॉ. रामजीलाल जांगिड़

विश्व भर में बोलचाल के लिए लगभग 3,500 भाषाओं और बोलियों का प्रयोग किया जाता है, किंतु एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य तक लिखकर बात पहुँचाने में इनमें से 500 से अधिक भाषाओं या बोलियों का इस्तेमाल नहीं होता। मौखिक और लिखित दोनों प्रकार के संचार के लिए काम आने आने वाली भाषाओं में से लगभग 16 भाषाएँ ऐसी हैं, जिनका व्यवहार 5 करोड़ से अधिक लोग करते हैं। विश्व की ये 16 प्रमुख भाषाएँ हैं: अरबी, अंग्रेजी, इतालवी, उर्दू, चीनी परिवार की भाषाएँ, जर्मन, जापानी, तमिल, तेलुगु, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, बांगला, मलय-बहासा (भाषा), रूसी, स्पेनी और हिन्दी।

यह गौरव की बात है कि भारत ही ऐसा एकमात्र देश है, जिसकी पाँच भाषाएँ विश्व की 16 प्रमुख भाषाओं की सूची में शामिल हैं। भारतीय भाषाएँ बोलने वाले व्यक्ति भारत सहित 137 देशों में फैले हुए हैं। लेकिन यह दुरूख की बात है कि इस सूची में शामिल भारतीय भाषाओं में प्रमुख हिन्दी का व्यवहार करने वालों की प्रामाणिक संख्या अब तक नहीं जानी जा सकी है।

विश्व की प्रमुख भाषाओं का व्यवहार करने वालों के बारे में पश्चिमी देशों के कई विद्वानों ने सर्वेक्षण किए हैं, किंतु इन सब के निष्कर्षों में हजारों का अंतर है। दुर्भाग्यवश एक भी पश्चिमी विद्वान ऐसा नहीं है, जिसने भारत की जनगणना में मातृभाषाओं के बारे में एकत्र किए गए आँकड़ों का विश्लेषण करके और अन्य देशों के हिन्दी भाषियों के आँकड़ों का विश्लेषण करके और अन्य देशों के हिन्दी भाषियों के आँकड़े जमा करके विश्व की प्रमुख भाषाओं की सूची में हिन्दी का सही स्थान निर्धारित किया हो। अन्य देशों के विद्वानों को ही क्यों दोष दें, जब स्वयं भारत और अन्य 136 देशों में रहने वालें करोड़ों भारतवासियों में से किसी ने भी अब तक इस दिशा में वैज्ञानिक ढंग से शोध नहीं किया है। विश्व भाषाओं में हिन्दी का सही स्थान तलाशने का काम तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन से ही शुरू कर दिया जाता तो अच्छा रहेगा।

वॉशिंगटन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सिडनी कुलबर्ट द्वारा 1970 में जमा किए गए आँकड़ों के अनुसार बोलने वालों की संख्या की दृष्टि से विश्व की प्रमुख

भाषाओं में (चीन और अंग्रेजी के बाद) हिन्दी का तीसरा स्थान था। अमरीका और फ्रांस के कुछ विद्वानों ने (चीनी, अंग्रेजी और रूसी के बाद) हिन्दी को स्पेनी के साथ चौथा स्थान दिया है। किन्तु मेरी मान्यता है कि विश्व की प्रमुख भाषाओं में (चीनी के बाद) हिन्दी का दूसरा स्थान है। मुझे लगता है कि पश्चिमी विद्वानों ने भारतीय भाषाएँ बोलने वालों के आँकड़ों का गहराई से विश्लेषण नहीं किया। मैं अपने उक्त निष्कर्ष पर दो ढंगों से पहुँचा हूँ: पहले, भारत के राज्यों और संघ क्षेत्रों की 1971 की जनसंख्या का विश्लेषण करके, दूसरे विभिन्न भारतीय भाषाओं और बोलियों का व्यवहार करने वालों की संख्या की जाँच-पड़ताल करके।

विदेशी विद्वानों ने भारत की जनगणना (1971) के आँकड़ों के आधार पर अपनी तालिकाएँ बनाई हैं, इसलिए पहले यह जाँच करना जरूरी है कि भारत की जनगणना (1971) में हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं के साथ क्या बर्ताव किया गया है? जनगणना करने वालों ने यह प्रश्न पूछा होता कि क्या मातृभाषा के अलावा आप हिन्दी जानते, बोलने या समझते हैं तो हिन्दी का व्यवहार करने वालों की सही स्थिति सामने आ जाती। किंतु जनगणना विभाग ने भाषाओं और बोलियों के आँकड़े तैयार करते समय कई विचित्र भारतीय भाषाओं की ही खोज कर डाली है। उदाहरण के लिए जनगणना विभाग द्वारा प्रकाशित आँकड़ों के अनुसार 1971 में भारत में 73,847 लोग 'किसान' भाषा, 25,066 लोग 'क्षत्रिय' भाषा, 24,624 लोग 'इस्लामी' और 5,111 व्यक्ति 'राजपूती' भाषा बोलते हैं। वास्तव में किसान खेती करने वाले को कहते हैं, जबकि क्षत्रिय या राजपूत जातिसूचक शब्द हैं और इस्लाम एक संप्रदाय है। व्यवसाय, जाति या धर्म को मातृभाषा बना देना कैसे उचित कहा जा सकता है? इन आँकड़ों का खोखलापन इससे ज्यादा क्या प्रकट होगा कि राजस्थानी के विभिन्न रूपों—मारवाड़ी, ढूंढारी, मेवाड़ी और हाड़ौती को स्वतंत्र मातृभाषाएँ मानते हुए, इनका व्यवहार करने वालों के अलग आँकड़े दिए गए हैं। राजस्थान में सरकारी कामकाज, जनसंचार, व्यापार और शिक्षा का माध्यम हिन्दी है, इसलिए इन्हें हिन्दी परिवार में ही शामिल किया जाना चाहिए था। यही व्यवहार ब्रज, अवधी, बिहारी, भोजपुरी, मैथिली, मगही, पूर्वी, नागरी और हिन्दुस्तानी के अंतर्गत दिए गए आँकड़ों के साथ किया जाना चाहिए था। कुछ शहरों के नाम से भी 'भाषाएँ' दे दी गई हैं। जैसे : भागलपुरी, विलासपुरी, नागपुरी, मुजफ्फरपुरी, हजारीबाग और जयपुरी।

यदि अंग्रेजी के प्रभाव क्षेत्र में ऊपर दिए गए देशों के अलावा अंग्रेजों के भूतपूर्व उपनिवेशों के दो प्रतिशत अंग्रेजी बोलने या समझने वालों को भी जोड़

लिया जाए तब भी अंग्रेजी का व्यवहार करने वालों की संख्या हिन्दी जानने-समझने वालों की तुलना में कम ही रहेगी। हम लोग स्टेट्समैन इयरबुक के 119 वें संस्करण (1982-83) को आधार मानें तब पता चलता है कि अंग्रेजी के मूल क्षेत्र माने जाने वाले देशों अमरीका (1980 की जनसंख्या 22.65), ग्रेट-ब्रिटेन (1981 की जनसंख्या 5.593 करोड़), कनाडा (1981 की जनसंख्या 2.42 करोड़), ऑस्ट्रेलिया (1980 की जनसंख्या 1.462 करोड़), आयरलैंड (1979 की जनसंख्या 33.7 लाख), और न्यूजीलैंड (1981 की जनसंख्या 32 लाख) की संयुक्त जनसंख्या 1981 के आस-पास 32.782 करोड़ थी। जबकि इसी वर्ष भारत की जनसंख्या 68.39 करोड़ थी। भारत के लगभाग 70 प्रतिशत लोग राजकाज, जनसंचार, शिक्षा, व्यापार या घर के बाहर संपर्क के लिए हिन्दी का प्रयोग करते हैं। यह मानने पर हिन्दी का व्यवहार करने वालों की संख्या 47.87 करोड़ बन जाती है। जो विश्व भर में अंग्रेजी के गढ़ देशों की कुल जनसंख्या के लगभग डेढ़ गुना के बराबर है। यदि भारत में आधे लोगों को भी हिन्दी व्यवहार करने वालों में गिना जाए तब भी अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी का ही पलड़ा भारी पड़ता है और हिन्दी विश्व की दूसरी प्रमुख भाषा बन जाती है

आज दुनिया का कौन-सा कोना है, जहाँ भारतीय न हों। अनिवासी भारतीय सपूर्ण विश्व में फैले हुए हैं। दुनिया के डेढ़ सौ से अधिक देशों में दो करोड़ से अधिक भारतीयों का बोलबाला है। अधिकांश प्रवासी भारतीय आर्थिक रूप से समृद्ध हैं। 1999 में मशीन ट्रांसलेशन शिखर बैठक में में टोकियो विश्वद्यालय के प्रो. होजुमि तनाका ने जो भाषाई आँकड़े प्रस्तुत किए थे, उनके अनुसार विश्व में चीनी भाषा बोलने वालों का स्थान प्रथम और हिन्दी का द्वितीय तथा अंग्रेजी का तृतीय है।

हिन्दी विश्व के सर्वाधिक आबादी वाले दूसरे देश भारत की प्रमुख भाषा है तथा फारसी लिपि में लिखी जाने वाली भाषा उर्दू हिन्दी की ही एक अन्य शैली है। लिखने की बात छोड़ दें तो हिन्दी और उर्दू में कोई विशेष अंतर नहीं रह जाता सिवाय इसके कि उर्दू में अरबी, फारसी, तुर्की आदि शब्दों का बहुलता से इस्तेमाल होता है। एक ही भाषा के दो रूपों को हिन्दी और उर्दू, अलग-अलग नाम देना अंग्रेजों की कूटनीति का एक हिस्सा था।

विदेशों में चालीस से अधिक देशों के 600 से अधिक विश्वविद्यालयों और स्कूलों में हिन्दी पढ़ाई जा रही हैं। भारत से बाहर जिन देशों में हिन्दी का बोलने, लिखने-पढने तथा अध्ययन और अध्यापक की दृष्टि से प्रयोग होता है, उन्हें हम

इन वर्गों में बांट सकते हैं–1. जहाँ भारतीय मूल के लोग अधिक संख्या में रहते हैं, जैसे–पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बंगलादेश, म्यांमार, श्रीलंका और मालदीव आदि। 2. भारतीय संस्कृति से प्रभावित दक्षिण पूर्वी एशियाई देश, जैसे–इंडोनेशिया, मलेशया, थाईलैंड, चीन, मंगोलिया, कोरिया तथा जापान आदि। 3. जहाँ हिन्दी को विश्व की आधुनिक भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा और यूरोप क देश। 4. अरब और अन्य इस्लामी देश, जैसे–संयुक्त अरब अमरीरात (दुबई) अफगानिस्तान, कतर, मिस्र, उजबेकिस्तान, कजाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान आदि।

तीसरे वर्ग में यूरोप अमरीका आदि वे विकसित राष्ट्र रखे जा सकते हैं, जहाँ बहुत बड़ी संख्या में भारत के लोग बस भी गए हैं और अस्थायी रूप में जा भी रहे हैं। इन लोगों में यदि किसी प्रांत विशेष या क्षेत्र विशेष के लोग परस्पर मिलते है। तो अपनी क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग करते हैं। पर यदि विभिन्न भारतीय भाषाभाषी मिलते हैं तो संपर्क भाषा प्रायः हिन्दी होती है। उदाहरण में तौर पर अमरीका, कनाडा में गुजराती-भाषी काफी संख्या में बसे हैं। यदि गुजराती लोग परस्पर मिलेंगे तो आरंभिक संपर्क अंग्रेजी में होने के बाद संपर्क और बातचीत की भाषा गुजराती हो जाएगी। पर यदि गुजराती और तमिल भाषी या गुजराती और मलयालम भाषी मिलेंगे या एकाधिक भारतीय भाषाओं के बोलने वाले मिलेंगे तो व्यक्तिगत संपर्क भाषा अधिकांशतः हिन्दी बन जाएगी। भारत में अंग्रेजी ज्ञान विज्ञान की भाषा के रूप में उतनी नहीं, जितनी प्रतिष्ठाभास की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। यही स्थिति विदेशों में भारतीय के पारस्परिक मिलन के समय भी कुछ कुछ उभर आती है। पर इस आभास से मुक्ति मिलते ही संपर्क भाषा हिन्दी बनती है। यही बात भारत पाकिस्तान के लोगों के पारस्परिक मिलन पर होती है। प्रतिष्ठाभासी स्तर पर अंग्रेजी चलने के बाद आत्मीय सम्मिलन उस हिन्दी में होता है जो भारत और पाकिस्तान की वास्तविक बोली है, जिसमें संस्कृत अरबी फारसी की असहज रूप में ठूंसी नहीं जाती, सहज शब्दावली सहज रूप में बोली समझी जाती है।

भारत में उच्च और उच्चभासी वर्गों की संपर्क भाषा अंग्रेजी है जिनकी संख्या 3 प्रतिशत से अधिक नहीं है। लोक जीवन अपनी अपनी प्रांतीय क्षेत्रीय भाषाओं में चलता है, वास्तविक लोक संपर्क हिन्दी के माध्यम से चलता है। इसी प्रकार विदेशों में भारत और पाकिस्तान के निवासियों के पारस्परिक मिलन प्रसंगों में उच्च और उच्चाभासी वर्गों के लोगों के मिलन पर अंग्रेजी चलती है, एक भाषी

संपर्कों में क्षेत्रीय भाषा, एकाधिक भाषी संपर्कों में हिन्दी कुल मिलाकर 20 से अधिक अंग्रेजी का उपयोग ये लोग नहीं करते। हिन्दी जानने वाले व्यक्ति को इस फैली हुई हिन्दी की दुनिया में, अंग्रेजी न जानने पर भी, कोई कठिनाई नहीं होती। सैकड़ों लोग भारत से किसी भी प्रदेश की भाषा के बोलने वाले, विकसित देशों में कहीं काम के लिए चले जा रहे हैं। हिन्दी उनके लिए माध्यम का काम कर रही है और वे अपना काम कर रहे हैं आर हिन्दी को विश्व की भाषा बना सके यही हम सबका प्रयास है और रहेगा। एक दिन हम हिन्दी को आभामंडल की भाषा बना सके सबका साझा प्रयास होगा।

संदर्भ सूची :

1. प्रवासी भारतीयों की हिन्दी सेवा, श्रीमती केलास कुमारी सहाय
2. ब्रिटेन में हिन्दी, श्रीमती उषा राजे सक्सेना, 2005
3. विदेशो में हिन्दी पत्रकारिता, डॉक्टर पवन कुमार जैन
4. हिन्दी भाषा का अंतर्राष्ट्रीय सन्दर्भ, डॉ भोला नाथ तिवारी, ईस्ट आजाद नक्कर दिल्ली-51
5. विदेशों में हिन्दी साहित्य का अध्ययन, बिजनौर टाइम्स, 16 नबम्बर 2012 प्रो. वसुधा डालमिया
6. डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया, (1994)–राजभाषा हिन्दी वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. डॉ. शंकरदयाल सिंह, संविधान सभा और राजभाषा, राजभाषा भारती, गृह मंत्रालय।
8. प्रो. सूरजभान सिंह, (1991)–हिन्दी भाषा संदर्भ और संरचना, दिल्ली।
9. डॉ. अजय कुमार सिंह : मीडिया की बदलती भाषा, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, सं. 2012
10. डॉ. रत्नकुमार पांडेय, मीडिया का यथार्थ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2008

□□□

Revisiting
Bhimrao Ambedkar
A Study of Social and Political Justice

EDITED BY
Dr. Gopal Parshad
Dr. Mahabir Narwal

Revisiting
Bhimrao Ambedkar
A Study of Social and Political Justice

Edited by

Dr. Gopal Parshad
Associate Professor of History
Kurukshetra University,
Kurukshetra

Dr. Mahabir Narwal
Professor of Commerce
Kurukshetra University,
Kurukshetra

SANJAY PRAKASHAN
New Delhi (India)

11. Socio-Political Philosophy of Dr. B.R. Ambedkar: A Study / *Dr. Jyoti* 128
12. Dr. B. R. Ambedkar's Views on Caste System with Geographical Perspective / *Poonam Bharti* 138
13. The Practice of Triple Talaq: A Stigma on Ambedkar's Vision of Social Justice / *Kanchan Kishor Rawat* 147
14. Dr. B.R. Ambedkar's Vision For Social Justice Under Indian Constitution / *Dr. Sant Lal Nirvaan* 156
15. Ambedkar and Labour Reforms: Delineation of His Perspective / *Dr. Ajay Solkhe* 165
16. Dr. B.R. Ambedkar's Economic Research, Theories and Thought: Panacea to Indian Economic Problems / *Dr. J.K. Chandel* 176
17. An Overview of Ambedkar's Economic Ideas & Contributions / *Sunil Kumar* 195
18. Dr. B.R. Ambedkar : The Father of Dalit literature / *Madhu Bala* 208
19. Role of Baba Saheb Ambedkar in Indian Nationalism / *Pinki* 219
20. The Dalit Expression of Mithila Paintings: Classification and Cultural Demonstration *Dr. Gurcharan Singh* 227
21. Dalit Aesthetics and the Art of Savinder Savarkar *Dr. Mandakini Sharma* 235
22. महानायक बाबा साहेब डॉ. अंबेडकर के राजनीतिक एवं प्रशासनिक विचार / *निशा मुरलीधरन* 243
23. डॉ भीमराव अंबेडकर का जीवन और सामाजिक न्याय *डॉ कामराज सिंधु* 250
24. डॉ. अंबेडकर के राजनैतिक चिन्तन की वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता / *प्रवेश कुमार* 258
25. डॉ. भीमराव अंबेडकर : संघर्ष के विविध आयाम *डॉ. सीमा सिंह* 274

23

डॉ भीमराव अंबेडकर का जीवन और सामाजिक न्याय

–डॉ कामराज सिंधु

डॉ. भीमराव अंबेडकर (14 अप्रैल, 1891-1956), रामजी मालोनी सकपाल एवं भीमाबाई की 14वीं संतान थे। वे मराठी परिवार से संबंध रखते थे, जो महाराष्ट्र के जिला रत्नागिरी में स्थित अवाम्बडे नगर नगर में निवास करते थे। उन्होंने अध्ययन, लेखन, भाषण और संगठन के बहुत से काम किए जिनका प्रभाव उस समय की और बाद की राजनीति पर पड़ा। भीमराव अंबेडकर का जन्म निम्न वर्ग की महार जाति में हुआ था। उस समय अंग्रेज़ निम्न वर्ग की जातियों के नौजवानों को फ़ौज में भर्ती कर रहे थे। अंबेडकर के पूर्वज लंबे समय तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना में कार्यरत थे। उनके पिता रामजी अंबेडकर ब्रिटिश फ़ौज में सूबेदार थे और कुछ समय तक एक फ़ौजी स्कूल में अध्यापक भी रहे। उनके पिता ने मराठी और अंग्रेज़ी में औपचारिक शिक्षा की डिग्री प्राप्त की थी। अंबेडकर का सम्पूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधारों के लिए समर्पित था। अस्पृश्यों तथा दलितों के वे मसीहा थे। उन्होंने सदियों से पद-दलित वर्ग को सम्मानपूर्वक जीने के लिए एक सुस्पष्ट मार्ग दिखाया। उन्हें अपने विरुद्ध होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति प्राप्त की। उनके अनुसार, सामाजिक प्रताड़ना राज्य द्वारा दिए जाने वाले दण्ड से भी कहीं अधिक दुःखदाई है। उन्होंने प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का विशद अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा की कि भारतीय समाज में वर्ण-व्यवस्था, जाति प्रथा तथा अस्पृश्यता का प्रचलन समाज में कालान्तर में आई विकृतियों के कारण उत्पन्न हुई है। उन्होंने दलित वर्ग पर होने वाले

अन्याय का ही विरोध नहीं किया अपितु उनमें आत्म-गौरव, स्वाबलम्बन, आत्मविश्वास, आत्म सुधार तथा आत्म विश्लेषण करने की शक्ति प्रदान की। दलित उद्धार के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास किसी भी दृष्टिकोण से आधुनिक भारत के निर्माण में भुलाये नहीं जा सकते। पं. नेहरू के शब्दों में, 'डॉ. अंबेडकर, हिन्दू समाज की दमनकारी प्रवृत्तियों के विरुद्ध किए गए विद्रोह का प्रतीक थे।' उनके सामाजिक चिन्तन में अस्पृश्यों, दलितों तथा शोषित वर्ग के उत्थान के लिए काफी दर्शन झलकता है। वे उनके उत्थान के माध्यम से एक ऐसा आदर्श समाज स्थापित करना चाहते थे जिसमें समानता, स्वतंत्रता तथा भ्रातृत्व के तत्व आधारभूत सिद्धांत हों। डॉ. अंबेडकर एक महान समाज सुधारक भी थे, जिन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित अन्यायपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन लाने तथा सामाजिक न्याय की स्थापना के जबरदस्त प्रयास किए।

अंबेडकर सामाजिक समानता के लिए वे हमेशा प्रयत्नशील रहते थे। उन्होंने ऑल इण्डिया क्लासेस एसोसिएशन का गठन किया। दक्षिण भारत में बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में गैर-ब्राह्मणों ने 'दि सेल्फ रेस्पेक्ट मूवमेंट' प्रारम्भ किया, जिसका उद्देश्य उन भेदभावों को दूर करना था जिन्हें ब्राह्मणों ने उन पर थोप दिया था। सम्पूर्ण भारत में दलित जाति के लोगों ने उनके मन्दिरों में प्रवेश-निषेध एवं इस तरह के अन्य प्रतिबन्धों के विरुद्ध अनेक आन्दोलनों का सूत्रपात किया। परन्तु विदेशी शासन काल में अस्पृश्यता विरोधी संघर्ष पूरी तरह से सफल हुआ। विदेशी शासकों को इस बात का भय था कि ऐसा होने से समाज का परम्परावादी एवं रूढ़िवादी वर्ग उनका विरोधी हो जाएगा। अतः क्रान्तिकारी समाज-सुधार का कार्य केवल स्वतन्त्र भारत की सरकार ही कर सकती थी। उस समय सामाजिक पुनरुद्धार की समस्या राजनीतिक एवं आर्थिक पुनरुद्धार की समस्याओं के साथ गहरे तौर पर जुड़ी हुई थी, जैसे, दलितों के सामाजिक पुनरुत्थान के लिए उनका आर्थिक पुनरुत्थान आवश्यक था, सन् 1932 में पूना समझौते में गांधी और अंबेडकर, आपसी विचार-विमर्श के बाद एक मध्यमार्ग पर सहमत हुए। अंबेडकर ने शीघ्र ही हरिजनों को अपना नेतृत्व प्रदान किया और उनकी ओर से कई पत्रिकाएं निकाली गईं; वह हरिजनों के लिए सरकारी विधान परिषदों में विशेष प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में भी सफल हुए। अंबेडकर ने हरिजनों का पक्ष लेने के महात्मा गांधी के दावे को चुनौती दी और 'व्हॉट कांग्रेस एंड गांधी हैव डन टु द अनटचेबल्स (सन् 1945), नामक लेख लिखा। सन् 1947 में अंबेडकर भारत सरकार के क़ानून मंत्री बने। उन्होंने

भारत के संविधान की रूपरेखा बनाने में प्रमुख भूमिका निभाई, जिसमें उन्होंने अछूतों के साथ भेदभाव को प्रतिबंधित किया और चतुराई से इसे संविधान सभा द्वारा पारित कराया। सरकार में अपना प्रभाव घटने से निराश होकर उन्होंने सन् 1951 में त्यागपत्र दे दिया।

13 अक्टूबर 1935 को, अंबेडकर सरकारी लॉ कॉलेज के प्रधानाचार्य नियुक्त किये गये और इस पद पर उन्होंने दो वर्ष तक कार्य किया। इसके चलते अंबेडकर बंबई में ही बस गये, उन्होंने यहाँ एक घर का निर्माण कराया, जिसमें उनके निजी पुस्तकालय में 50000 से अधिक पुस्तकें थीं। इसी वर्ष उनकी पत्नी रमाबाई की एक लंबी बीमारी के बाद मृत्यु हो गई। वे मृत्यु से पहले तीर्थयात्रा के लिये पंढरपुर जाना चाहती थीं पर अंबेडकर ने उन्हें इसकी इजाज़त नहीं दी। अंबेडकर ने कहा कि उस हिन्दू तीर्थ में जहाँ उनको अछूत माना जाता है, जाने का कोई औचित्य नहीं है। इसके बजाय उन्होंने उनके लिये एक नया पंढरपुर बनाने की बात कही। भले ही अस्पृश्यता के खिलाफ उनकी लड़ाई को भारत भर से समर्थन हासिल हो रहा था पर उन्होंने अपना रवैया और अपने विचारों को रूढ़िवादी हिंदुओं के प्रति और कठोर कर लिया। उनकी रूढ़िवादी हिंदुओं की आलोचना का उत्तर बड़ी संख्या में हिन्दू कार्यकर्ताओं द्वारा की गयी उनकी आलोचना से मिला। 13 अक्टूबर को नासिक के निकट येओला में एक सम्मेलन में बोलते हुए अंबेडकर ने धर्म परिवर्तन करने की अपनी इच्छा प्रकट की। उन्होंने अपने अनुयायियों से भी हिन्दू धर्म छोड़ कोई और धर्म अपनाने का आह्वान किया। उन्होंने अपनी इस बात को भारत भर में कई सार्वजनिक सभाओं में दोहराया भी। सन् 1956 में वह नागपुर में एक समारोह में अपने दो लाख अछूत साथियों के साथ हिन्दू धर्म त्यागकर बौद्ध बन गए, क्योंकि छुआछूत अब भी हिन्दू धर्म का अंग बनी हुई थी। डॉ. अंबेडकर को सन् 1990 में मरणोपरांत भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

दलितों के प्रति अंबेडकर की सोच–अंबेडकर का विश्वास था कि दलितों के उत्थान में केवल उच्च वर्णों की सहानुभूति और सद्भावना ही पर्याप्त नहीं है। उनका मत था कि दलितों का तो वास्तव में तब उत्थान होगा जबकि वे स्वयं सक्रिय तथा जागृत होंगे। इसलिये उन्होंने घोषणा की कि शिक्षित बनो, आन्दोलन चलाओ और संगठित रहो। दलित वर्ग की शिक्षा के बारे में उनका मत था कि इस वर्ग के अत्याचार तथा उत्पीड़न सहन करने तथा वर्तमान परिस्थितियों को सन्तोषपूर्ण मानकर स्वीकार करने की प्रवृति का अन्त करने के

लिए उनमें शिक्षा का प्रसार आवश्यक है। शिक्षा के माध्यम से ही उन्हें इस बात का आभास होगा कि विश्व कितना प्रगतिशील है तथा वे कितने पिछड़े हुए है। उनका मानना था कि दलितों को अन्याय, अपमान तथा दबाव को सहन करने के लिए मजबूर किया जाता है। वे इस बात से दुखी थे कि दलित इस प्रकार की परिस्थितियों को बिना कुछ कहे स्वीकार कर लेते। वे संख्या में अधिक होने के बावजूद उत्पीड़न को सहन कर लेते, जबकि यदि एक अकेली चींटी पर भी पैर रख दिया जाए तो वह प्रतिरोध करते हुए काट डालती। इन परिस्थितियों को समाप्त करने के लिए अंबेडकर दलितों में शिक्षा के प्रसार को बहुत महत्त्वपूर्ण मानते थे। उन्हें केवल औपचारिक शिक्षा ही नहीं अपितु अनौपचारिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए।

छुआछूत के विरुद्ध संघर्ष–1920 के दशक में बंबई में एक बार बोलते हुए उन्होंने साफ-साफ कहा था जहाँ मेरे व्यक्तिगत हित और देशहित में टकराव होगा वहाँ मैं देश के हित को प्राथमिकता दूँगा, लेकिन जहाँ दलित जातियों के हित और देश के हित में टकराव होगा, वहाँ मैं दलित जातियों को प्राथमिकता दूँगा। वे अंतिम समय तक दलित-वर्ग के मसीहा थे और रहेंगे। जब महात्मा गाँधी ने दलितों को अल्पसंख्यकों की तरह पृथक निर्वाचन मंडल देने के ब्रिटिश नीति के खिलाफ आमरण अनशन किया तो अंबेडकर ने गाँधी के अनशन के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद की और सन् 1927 में उन्होंने हिन्दुओं द्वारा निजी सम्पत्ति घोषित सार्वजनिक तालाब से पानी लेने के लिए अछूतों को अधिकार दिलाने के लिए एक सत्याग्रह का नेतृत्व किया।

वर्ण-व्यवस्था के प्रति संघर्ष :

भारतीय आर्यों के सामाजिक संगठन का आधार चतुर्वर्ण व्यवस्था रहा है। इस आधार पर समाज को अपने कार्य के आधार पर चार भागों में विभाजित कर रखा था। अंबेडकर ने इस व्यवस्था को अवैज्ञानिक अत्याचारपूर्ण, संकीर्ण, गरिमाहीन बताते हुए इसकी कटु आलोचना की। उनके अनुसार यह श्रम के विभाजन पर आधारित न होकर श्रमिकों के विभाजन पर आधारित था। उनके अनुसार भारतीय समाज की चतुर्वर्ण व्यवस्था यूनानी विचारक प्लेटो की सामाजिक व्यवस्था के बहुत निकट है। प्लेटो ने व्यक्ति की कुछ विशिष्ट योग्यताओं के आधार पर समाज का विभाजन करते हुए उसे तीन भागों में विभाजित किया। अंबेडकर ने इन दोनों व्यवस्थाओं की जोरदार आलोचना की तथा स्पष्ट किया

कि क्षमता के आधार पर व्यक्तियों का सुस्पष्ट विभाजन ही अवैज्ञानिक तथा असंगत है। अंबेडकर का मत था कि उन्नत तथा कमजोर वर्गों में जितना उग्र संघर्ष भारत में है वैसा विश्व के किसी अन्य देश में नहीं है। ऐतिहासिक आधारों पर अंबेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि शूद्रों की उत्पत्ति तथा हीनता का कारण वे स्वयं न होकर ब्राह्मणों का जान-बूझकर किया गया प्रयास था।

जाति-प्रथा का विरोध :

डॉ भीमराव अंबेडकर ने भारत में जाति-व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं और लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयास किया जातीय आधार पर वर्गीकृत इस व्यवस्था को व्यवहार में व्यक्तियों द्वारा परिवर्तित करना असम्भव है। क्योंकि इस व्यवस्था में कार्यकुशलता की हानि होती है, और जातीय आधार पर व्यक्तियों के कार्यों का पूर्व में ही निर्धारण मान लिया जाता है। यह निर्धारण भी उनके प्रशिक्षण अथवा वास्तविक क्षमता के आधार पर न होकर जन्म तथा माता पिता के सामाजिक स्तर के आधार पर किया गया है। इस व्यवस्था से सामाजिक स्थैतिकता पैदा होती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने वंशानुगत व्यवस्था का अपनी स्वेच्छा से परिवर्तन नहीं कर सकता जब कि बाबा साहेब इस व्यवस्था के बिलकुल विपरीत थे। यह व्यवस्था संकीर्ण प्रवृतियों को जन्म देती है और समाज में आपसी मेल मिलाप को खत्म करती है, क्योंकि हर व्यक्ति अपनी जाति के अस्तित्व के लिए अधिक जागरूक होता है, अन्य जातियों के सदस्यों से अपने सम्बन्ध दृढ़ करने की कोई भावना नहीं होती है। नतीजन उनमें राष्ट्रीय जागरूकता की भी कमी उत्पन्न होती है। जाति के पास इतने अधिकार हैं कि वह अपने किसी भी सदस्य से उनके नियमों की उल्लंघना पर दण्डित या समाज से बहिष्कृत कर सकती है जिसको आज के परिप्रेक्ष्य में खापपंचायत का नाम दिया गया है। अन्तर्जातीय विवाह इस व्यवस्था में निषेध होते हैं।इस प्रकार अंबेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयत्न और प्रयास किया कि जाति-व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विकृति है और अभिशाप है, जिसके परिणाम आज के समाज के लिए बहुत ही घातक सिद्ध हुए हैं। जाति व्यवस्था के कारण लोगों में एकता की भावना का अभाव आज भी दिखाई देता है, अतः भारतीयों का किसी एक विषय पर जनमत तैयार नहीं हो सकता। उनके अनुसार जाति व्यवस्था ने केवल हिन्दू समाज को दुष्प्रभावित नहीं किया अपितु भारत के राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक जीवन में भी जहर घोल दिया।

दलितों का प्रतिनिधि :

डॉ भीमराव अंबेडकर का मानना था कि दलित वर्ग को अपने हितों की रक्षा के लिए राजनीतिक सत्ता में पर्याप्त प्रतिनिधित्व लेना चाहिए तबी उनके अधिकारों कि रक्षा हो सकती है। अतः उनका सुझाव था कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलों में दलितों की भागीदारी हेतु पर्याप्त प्रतिनिधित्व के लिए कानून बनाया जाना चाहिए। इसी प्रकार उनका मानना था कि निर्वाचन कानून बनाकर यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि प्रथम दस वर्ष तक दलित वर्ग के वयस्क मताधिकारियों द्वारा पृथक निर्वाचन के माध्यम से अपने प्रतिनिधि का निर्वाचन किया जाना चाहिए तथा बाद में दलित वर्ग हेतु आरक्षित स्थानों पर सम्बन्धित निर्वाचन क्षेत्र के सभी वयस्क मताधिकारियों द्वारा निर्वाचन किया जाना चाहिए।

डॉ. भीमराव अंबेडकर का मत था कि दलित वर्ग को नीति निर्माण के कार्यों और दलितों के उत्थान में उचित अवसर के लिए मंत्रिमण्डलों में भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व का अधिकार होना चाहिए। उनको डर था कि बहुमत के बिना शासन में दलित वर्ग के हितों तथा अधिकारों की उपेक्षा हो सकती है। यदि दलित वर्ग को कार्यपालिका में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलेगा तो वह अपने अधिकारों तथा हितों कि अधिक रक्षा कर सकते है और अपने विकास के लिए निर्माण के लिए अधिक सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है।उनका मत था कि बौद्ध धर्म सामाजिक असमानता को समाप्त कर भ्रातृत्व की भावना विकसित कर सकता है। यही कारण था कि डॉ भीम राव अंबेडकर ने स्वयं अपने जीवन के अंतिम दिनों में बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था। इस संदर्भ में अंबेडकर के विचार महात्मा गांधी के विचारों से मेल नहीं खाते थे। महात्मा गांधी का यह कहना था कि धर्म परिवर्तन करने से दलित वर्गों की स्थिति में सुधार होगा ही, इसकी कोई गारंटी नहीं है लेकिन बाबा साहेब ने इनकी बात को छोटा कर दिया।

नारी सम्मान :

अंबेडकर ने नारी के सम्मान के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये और उस साहित्य की कटु आलोचना की जिसमें स्त्रियों के प्रति भेद-भाव का दृष्टिकोण अपनाया गया। उनका मानना था कि स्त्रियों के सम्मानपूर्वक तथा स्वतंत्र जीवन के लिए शिक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है। अंबेडकर भारतीय समाज में स्त्रियों की हीन

दशा से काफी क्षुब्ध थे। उन्होंने हमेशा स्त्री-पुरूष समानता का व्यापक समर्थन किया। यही कारण है कि उन्होंने स्वतंत्र भारत के प्रथम विधिमंत्री रहते हुए 'हिंदू कोड बिल' संसद में प्रस्तुत करते समय हिन्दू स्त्रियों के लिए न्याय सम्मत व्यवस्था बनाने के लिए इस विधेयक में व्यापक प्रावधान रखे। भारतीय संविधान के निर्माण के समय में भी उन्होंने स्त्री-पुरूष समानता को संवैधानिक दर्जा प्रदान करवाने के गम्भीर प्रयास किए। अंबेडकर के सामाजिक चिन्तन में अस्पृश्यों, दलितों तथा शोषित वर्ग के उत्थान के लिए काफी दर्शन झलकता है। वे उनके उत्थान के माध्यम से एक ऐसा आदर्श समाज स्थापित करना चाहते थे जिसमें समानता, स्वतंत्रता तथा भ्रातृत्व के तत्व समाज के आधारभूत सिद्धांत हों। डॉ. अंबेडकर एक महान सुधारक थे जिन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित अन्यायपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन तथा सामाजिक न्याय की स्थापना के जबरदस्त प्रयास किए।

1941 और 1945 के बीच में उन्होंने बड़ी संख्या में अत्यधिक विवादास्पद पुस्तकें और पर्चे प्रकाशित किये जिनमे थॉट्स ऑन पाकिस्तान भी शामिल है, जिसमें उन्होंने मुस्लिम लीग के मुसलमानों के लिए एक अलग देश पाकिस्तान की माँग की आलोचना की। 'वॉट कांग्रेस एंड गांधी हैव डन टू द अनटचेबल्स' (काँग्रेस और गान्धी ने अछूतों के लिये क्या किया) के साथ, अंबेडकर ने गांधी और कांग्रेस दोनों पर अपने हमलों को तीखा कर दिया उन्होंने उन पर ढोंग करने का आरोप लगाया। उन्होंने अपनी पुस्तक 'हू वर द शुद्राज़?(शुद्र कौन थे?)' के द्वारा हिन्दू जाति व्यवस्था के पदानुक्रम में सबसे नीची जाति यानी शुद्रों के अस्तित्व में आने की व्याख्या की। उन्होंने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि किस तरह से अछूत, शुद्रों से अलग हैं। अंबेडकर ने अपनी राजनीतिक पार्टी को अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन में बदलते देखा, हालांकि 1946 में आयोजित भारत के संविधान सभा के लिए हुये चुनाव में इसने ख़राब प्रदर्शन किया। 1948 में हूं वर द शुद्राज़? की उत्तरकथा 'द अनटचेबल्सः ए थीसिस ऑन द ओरिजन ऑफ अनटचेबिलिटी (अस्पृश्यः अस्पृश्यता के मूल पर एक शोध)' में अंबेडकर ने हिन्दू धर्म को लताड़ा। अंबेडकर इस्लाम और दक्षिण एशिया में उसकी रीतियों के भी आलोचक थे। उन्होंने भारत विभाजन का तो पक्ष लिया पर मुस्लिम समाज में व्याप्त बाल विवाह की प्रथा और महिलाओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार की घोर निंदा की।

उन्होंने लिखा कि मुस्लिम समाज में तो हिन्दू समाज से भी अधिक

सामाजिक बुराइयाँ हैं और मुसलमान उन्हें 'भाईचारे' जैसे नर्म शब्दों के प्रयोग से छुपाते हैं। उन्होंने मुसलमानों द्वारा अर्ज़ल वर्गों के खिलाफ भेदभाव जिन्हें 'निचले दर्जे का' माना जाता था के साथ ही मुस्लिम समाज में महिलाओं के उत्पीड़न की दमनकारी पर्दा प्रथा की भी आलोचना की। उन्होंने कहा हालाँकि पर्दा हिंदुओं में भी होता है पर उसे धार्मिक मान्यता केवल मुसलमानों ने दी है। उन्होंने इस्लाम में कट्टरता की आलोचना की जिसके कारण इस्लाम की नातियों का अक्षरक्ष अनुपालन की बद्धता के कारण समाज बहुत कट्टर हो गया है और उसे को बदलना बहुत मुश्किल हो गया है। उन्होंने आगे लिखा कि भारतीय मुसलमान अपने समाज का सुधार करने में विफल रहे हैं जबकि इसके विपरीत तुर्की जैसे देशों ने अपने आपको बहुत बदल लिया है। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि भारत में छोटी जात की समस्या बुनियादी समस्या नहीं है। बल्कि यह एक मूल समस्या है।

मृत्यु–अंबेडकर मधुमेह से पीड़ित थे और वो जून से अक्टूबर 1954 तक बहुत बीमार रहे। राजनीतिक मुद्दों से परेशान अंबेडकर ने अपना स्वास्थ्य खराब कर लिया और 1955 के दौरान किये गये लगातार काम ने उन्हें तोड़ कर रख दिया। अपनी अंतिम पाण्डुलिपि बुद्ध और उनके धम्म को पूरा करने के तीन दिन के बाद 6 दिसंबर 1956 को अंबेडकर की मृत्यु गई। 7 दिसंबर को चौपाटी समुद्र तट पर बौद्ध शैली में अंतिम संस्कार किया गया जिसमें लाखों समर्थकों, कार्यकर्त्ताओं और प्रशंसकों ने भाग लिया। लाखों दलितों का उगता सूरज सदा के लिए अस्त हो गया।

संदर्भः

1. बाबा साहेब अंबेडकर, सम्पूर्ण वांग्मय पब्लिकेशन, खंड-2,
2. डॉ अंबेडकर के विचार, यशवंत सों टक्के, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली।
3. अंबेडकर और मार्क्स, राव साहेब कसबे, सवांद प्रकशन, मेरठ।
4. दलित दस्तक पत्रिका...
5. महानायक बाबा साहेब डॉ अंबेडकर, मोहनदास नैमिशराय, धम्म ज्योति चैरिटेबल ट्रस्ट।
6. सामाजिक न्याय के सजक प्रहरी डॉ अंबेडकर, डॉ विष्णुदत नागर।
7. बाबा साहब डॉ अंबेडकर, सम्पूर्ण वाड्मय खंड 2।
8. भारत में दलित, सुखदेव थोराट, सेज प्रकाशन नई दिल्ली।

□

Social Harmony and Nation Building

(Perspectives of Dr. B.R. Ambedkar)

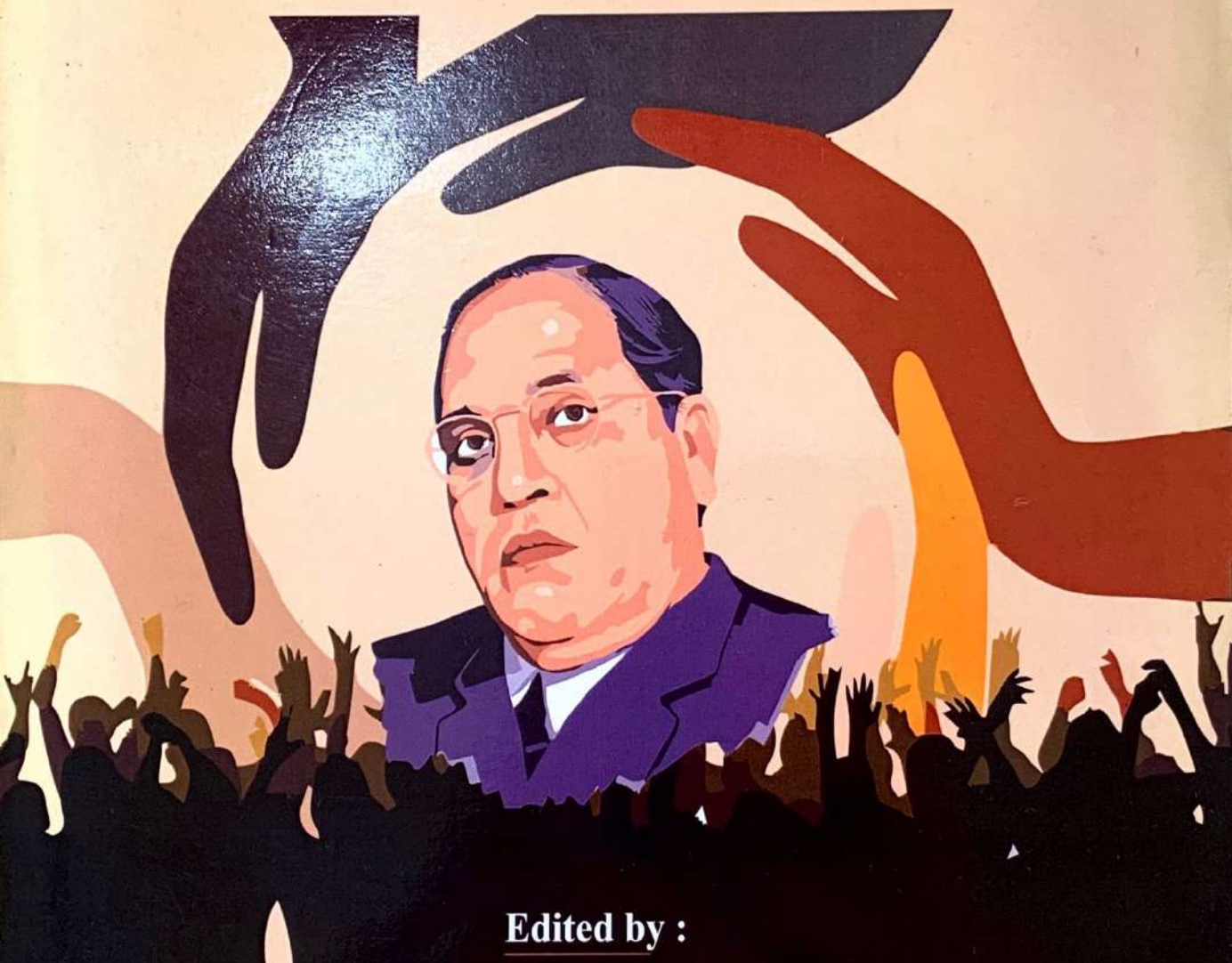

Edited by :

Dr. Gopal Parshad ★ Dr. Mahabir Narwal

Social Harmony and Nation-Building:

Perspectives of Dr. B.R. Ambedkar

Edited by

Dr. Gopal Parshad
Associate Professor of History
Deputy Director
Centre for Dr. B. R.
Ambedkar Studies
Kurukshetra University
Kurukshetra

Dr. Mahabir Narwal
Professor of Commerce
Director
Centre for Dr. B. R.
Ambedkar Studies
Kurukshetra University
Kurukshetra

SANJAY PRAKASHAN
New Delhi (India)

22 डॉ. भीमराव अम्बेडकर का जीवन, विचार और दर्शन
—डॉ. कामराज सिन्धु 295

23 बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर का राष्ट्र के सामाजिक सुधार एवं न्याय में योगदान
—लेखराम सेलोकर 305

24 डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक दर्शन और प्रासंगिकता राजनैतिक समानता
—मंदरूप सिंह 316

25 बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर के राजनीति विचारों का अध्ययन
—प्रदीप 'सुनीता रानी' 325

26 डॉ॰ अम्बेडकर के अधीनस्थ परिपेक्ष्य के संदर्भ में हरियाणा की विमुक्त व घुमंतू जातियों की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण
—श्रीमती रिंकल 335

27 भारतीय संविधान का निर्माण : डॉ॰ बी॰ आर॰ अम्बेडकर की भूमिका
—डॉ॰ राकेश मित्तल 348

28 नारी चेतना के प्रतीक : बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर
—राजेंद्र कुमार 360

List of the Contributors *369*

22

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का जीवन, विचार और दर्शन

—डॉ. कामराज सिन्धु

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का जन्म मध्यप्रदेश के महू नगर में रामजी नाम के एक सूबेदार के घर में 14 अप्रैल 1891 को हुआ। वे महार जाति के थे और रामजी मालोजी सकपाल और भीमाबाई मुरबादकर की 14 वीं व अंतिम संतान थे। उनका परिवार मराठी था जो अंबावडे नगर जो आधुनिक महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले में है, से संबंधित था। अनेक समकालीन राजनीतिज्ञों को देखते हुए उनकी जीवन-अवधि कुछ कम थी। किन्तु इस अवधि में भी उन्होंने अध्ययन, लेखन, भाषण और संगठन के बहुत से काम किए जिनका प्रभाव उस समय की और बाद की राजनीति पर पड़ा। भीमराव अम्बेडकर का जन्म निम्न वर्ण की जाति में हुआ था। उस समय अंग्रेज निम्न वर्ण की जातियों के नौजवानों को फौज में भर्ती कर रहे थे। अम्बेडकर के पूर्वज लंबे समय तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना में कार्यरत थे और भीमराव के पिता रामजी अम्बेडकर ब्रिटिश फौज में सूबेदार थे और कुछ समय तक एक फौजी स्कूल में अध्यापक भी रहे। उनके पिता ने मराठी और अंग्रेजी में औपचारिक शिक्षा की डिग्री प्राप्त की थी। वह शिक्षा का महत्त्व समझते थे और भीमराव की पढ़ाई लिखाई पर उन्होंने बहुत ध्यान दिया।

अछूत समझी जाने वाली जाति में जन्म लेने के कारण अपने स्कूली जीवन में अम्बेडकर को अनेक अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पड़ा। इन

सब स्थितियों का धैर्य और वीरता से सामना करते हुए उन्होंने स्कूली शिक्षा समाप्त की और तत्पश्चात उनकी कॉलेज की पढ़ाई शुरू हुई। इस बीच पिता का हाथ तंग हुआ। खर्चे की कमी हुई। एक मित्र उन्हें बड़ौदा के शासक गायकवाड़ के यहाँ ले गया। गायकवाड़ ने उनके लिए स्कॉलरशिप की व्यवस्था कर दी और अम्बेडकर ने अपनी कॉलेज की शिक्षा पूरी की। बड़ौदा महाराज की आर्थिक सहायता से वे एलिफिन्सटन कॉलेज से 1912 में ग्रेजुएट हुए। 1913 और 1915 के बीच जब अम्बेडकर कोलंबिया विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहे थे, तब एम.ए. की परीक्षा के एक प्रश्न पत्र के बदले उन्होंने प्राचीन भारतीय व्यापार पर एक शोध प्रबन्ध लिखा था। इस में उन्होंने अन्य देशों से भारत के व्यापारिक सम्बन्धों पर विचार किया है। इनमें भारत के आर्थिक विकास की रूपरेखा पर प्रकाश डाला। यह शोध प्रबन्ध रचनावली के 12वें खण्ड में प्रकाशित है।

कुछ साल बड़ौदा राज्य की सेवा करने के बाद उनको गायकवाड़-स्कालरशिप प्रदान किया गया जिसके सहारे उन्होंने अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए. (1915) किया। इसी क्रम में वे प्रसिद्ध अमेरिकी अर्थशास्त्री सेलिगमैन के प्रभाव में आए। सेलिगमैन के मार्गदर्शन में अम्बेडकर ने कोलंबिया विश्वविद्यालय से 1917 में पी एच. डी. की उपाधी प्राप्त की। उनके शोध का विषय था—'नेशनल डेवलेपमेंट फॉर इंडिया : ए हिस्टोरिकल एंड एनालिटिकल स्टडी'। इसी वर्ष उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स में दाखिला लिया लेकिन साधनाभाव में अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर पाए। कुछ दिनों तक वे बड़ौदा राज्य के मिलिटरी सेक्रेटरी रहे। फिर वे बड़ौदा से बम्बई आ गए। कुछ दिनों तक वे सिडेनहैम कॉलेज, बम्बई में राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्रोफेसर भी रहे। वे डिप्रेस्ड क्लासेज कांफरेंस से भी जुड़े और सक्रिय राजनीति में भागीदारी शुरू की। कुछ समय बाद उन्होंने इंग्लैंड जाकर लंदन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स से अपनी अधूरी पढ़ाई पूरी की। इस तरह विपरीत परिस्थिति में पैदा होने के बावजूद अपनी लगन और कर्मठता से उन्होंने एम.ए., पी एच. डी., एम. एस. सी., बार-एट-लॉ की डिग्रियाँ प्राप्त कीं। इस तरह से वे अपने युग के सबसे ज्यादा पढ़े-लिखे राजनेता एवं विचारक थे। उनको आधुनिक पश्चिमी समाजों की संरचना मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र एवं कानूनी दृष्टि से व्यवस्थित ज्ञान था। अछूतों के जीवन से उन्हें गहरी सहानुभूति थी। उनके साथ जो भेदभाव बरता

जाता था, उसे दूर करने के लिए उन्होंने आन्दोलन चलाया और दलितों को संगठित किया।

जिन लोगों ने नवभारत की तकदीर लिखी, उन लोगों में डॉ. आंबेडकर खास सख्शियत हैं. आंबेडकर ने अपने कार्य से समाज, अर्थव्यवस्था और राजनीति ही नहीं बल्कि धर्म के क्षेत्र में भी अद्वितीय स्थापनाएं दी। आज डॉ. आंबेडकर एक प्रमुख प्रेरक शक्ति हैं, जिनसे ऊर्जा लेकर लाखों लोगों के जीवन में क्रांति आई है और उनका जीवन सुखमय हो गया है। स्वतन्त्रता, समानता और बंधुत्व (भाईचारा) को उनके आंदोलन का केन्द्रीय तत्व माना जाता है। यही वे तत्व है, जिनको हम फ्रांस की क्रांति का जन्म दाता मानते है, कतिपय अमेरिका की क्रांति में भी यदि प्रमुख नहीं तो एक महत्वपूर्ण भूमिका इन तत्वों की रही थी। डॉ. आंबेडकर ने अपने भाषणों और लेखों में फ्रांस की क्रांति का खूब उदाहरण दिया है। इसलिए यह मान लिया गया है कि ये तीन प्रेरक तत्व डॉ. अम्बेडकर ने फ्रांस की क्रांति से लिये हैं लेकिन ऐसी सूचना को मान लेना गलत होगा। क्योंकि 3 अक्तूबर 1954 को बाबासाहेब ने आकाशवाणी दिल्ली से जारी अपने पांच मिनट्स के वक्तव में कहा था, 'मेरा जीवन सम्बंदित दर्शन तीनशब्दों में समाहित है- सवतन्त्रता, समानता और बंधुत्व (भाईचारा) लेकिन किसी को यह नहीं समझना चाहिए कि मैंने अपने जीवन-दर्शन को फ्रांस की क्रांति से लिया है। मैंने वैसा नहीं किया है, इस बात को मैं बड़े यकीन के साथ कहता हूं। मेरे दर्शन की बुनियाद राजनीति में नहीं है, बल्कि धर्म में है। मैंने अपने आदर्श तथागत बुद्ध की शिक्षा से इस दर्शन को अपनाया है।"

डॉ. अम्बेडकर अपने जीवन दर्शन में स्वतन्त्रता को कट्टरता के साथ नहीं अपनाते हैं। वे मानते हैं कि असीमित स्वतन्त्रता समानता को नुकसान पहुंचाती है। इसलिए वे स्वतन्त्रता को बेहद व्यवाहरिक मानते थे। उन्होंने समानता के मूल्य को भी कट्टरता से मुक्त करके स्वीकार किया है। जब हम सभी लोगों को एक समान समानता प्रदान करते हैं, तब हमारी आंखें खुली होनी चाहिए। अनेक अवसरों पर समानता स्वतन्त्रता को भारी हानि पहुंचाती है। हमें देखना यह है कि एक पेड़ पर चढ़ने के लिए यदि बंदर, घोड़ा, हाथी, कच्छुआ आदि को समानता का अधिकार देते हुए प्रतियोगिता में शामिल किया जाता है तो यह वास्तविक समानता नहीं होगी। वे स्वतन्त्रता से समानता के अतिक्रमण के खतरे को वे समझते थे, इसलिए डॉ. अम्बेडकर इनको कानूनी रूप से स्वीकार करते थे। इतना होने पर भी उन्होंने नहीं माना कि स्वतन्त्रता के द्वारा समानता

के अतिक्रमण और समानता के द्वारा स्वतन्त्रता के अतिक्रमण से कोई कानून बचाव कर पाएगा। इसलिए समाज को बंधुत्व ही बचा पाएगा, ऐसा उनका मानना था। बिना बंधुभाव के (भाईचारा) समाज अतिक्रमण के खतरों से मुक्त नहीं हो सकता। इसलिए उनके दर्शन में इन तीन मूल्यों को विशेष योगदान था.

इन तीन मूल्यों के अतिरिक्त डॉ. आंबेडकर ने अपने जीवन पर तीन बातों को विशेष रूप से अपनाया था। अम्बेडकरवादी लोगों को जानना जरूरी था कि ये तीन बातें बाबासाहेब ने 28 अक्तूबर 1954 को मुम्बई के स्टेडियम में कही थी जो 6 नवम्बर 1954 को साप्ताहिक 'जनता' में प्रकाशित हुई थी। ये तीन मूल्यवान चीजें हैं, पहली–शिक्षा, दूसरी–आत्मसमान और तीसरी–शील। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि 'ब्राह्मणों ने दलितों को पढ़ने नहीं दिया। धर्म के कानून हमारे रास्ते में पत्थर की तरह आड़े आ गए और हमें ज्ञान से, पढ़ने-लिखने से दूर रखा गया। हमारे लोग पत्थर को ही शिक्षा मानते थे। इसलिए हमारी धार्मिक मानताएं अपवित्र हुई है। बाबासाहेब को पढ़ने का इतना शौक था कि दिल्ली निवास पर उनकी निजी लाईब्रेरी में 20 हजार से अधिक पुस्तके थी। जब वे दिल्ली में थे तब वे अक्षर ठाकूर एंड कंपनी से किताबें खरीदते थे, जिनके हजार रुपये के बिल बाबासाहेब की ओर रुके रहते थे। एक दो बार ऐसा भी हुआ कि पुस्तकों के उधार को वे चुकता नहीं कर पाए। शिक्षा के प्रति उनके प्रेम को उनकी इस बात से भी जाना जा सकता है, वे कहते हैं–जिस प्रकार मनुष्य को जीने के लिए भोजन की जरूरत होती है, उसी प्रकार ज्ञान की भी जरूरत होती है। शिक्षा के बिना कोई भी आदमी कुछ नहीं कर सकता है।

डॉ. अम्बेडकर ने दूसरी महत्वपूर्ण चीज आत्म-सामान को माना है। उनका आत्म-सामान, किसी के आगे हाथ फैलाने से रोकता है। लेकिन उनके आत्म-सामान के भाव में निहित नहीं है, उसमें गहरी सामाजिकता है। वे अपने समय में अर्थशास्त्र की उतनी ऊंची डिग्री लिये हुए थे। उतनी ऊंची डिग्री उस समय पूरे भारत में किसी के पास नहीं थी। जब वे भारत आये तो डॉ. परांजये ने एक महाविद्यालय में अर्थशास्त्र का प्रोफेसर नियुक्त करना चाहा। डॉ. अम्बेडकर को तेरह लेक्चर देने के लिए कहा गया लेकिन उन्होंने केवल चार लेक्चरर देना ही स्वीकार किया। ऐसा इसलिए किया गया कि वास्तव में वे नौकरी नहीं करना चाहते थे। वे अपने लोगों के लिए काम करना चाहते थे। असल कारण था कि आजीविका के लिए वे किसी पर निर्भर नहीं होना चाहते थे। इसलिए आत्म सामान के साथ समाज के लिए काम के लिए उन्होंने नौकरी करनी पड़ी थी।

बाबासाहेब कहते हैं–'मैंने किसी के भी सामने हाथ नहीं फैलाया कि आप मुझे कोई पद दीजिए। हां, दूसरों के लिए कुछ किया होगा, लेकिन स्वयं के लिए मैंने एक अंगुल भर चिट्ठी भी लिखी हो तो कोई बताए। 'डॉ. अम्बेडकर को कई बार जज की नौकरी का ऑफर मिला। वे एक बार कौंसिलर बने, वे मंत्री भी रहे लेकिन अपने आत्म-सामान को छोड़ वे अवसरवादी नहीं बने। वे किसी भी रूप में दीनता के भाव को स्वीकार नहीं करते हैं। एक बार उन्होंने कहा–'मेरा स्वभिमान' इतना गहरा है कि मैं ईश्वर को भी अपने से छोटा मानता हूं।

तीसरी महत्वपूर्ण चीज डॉ. अम्बेडकर के जीवन में "शील"' था। बाबासाहेब ने किसी के साथ दगाबाजी नहीं की और न ही कभी धोखा दिया। वे अपने विचार और आचरण में ईमानदार बने रहे। वे कई बार यूरोप गए, यूरोप में शराब और सिगरेट का आम प्रचलन है, लेकिन अम्बेडकर कभी भी इन निरर्थक चीजों का सेवन नहीं किया। डॉ. अम्बेडकर का जीवन दर्शन तीन मूल्य स्वतन्त्रता, समानता और सहभाव तथा तीन बातें शिक्षा, आत्म-सामान और शील में देखा जा सकता है जो उन्होंने अपने जीवन में अपनाया। यहां एक और अति महत्व पूर्ण बात पर ध्यान देना जरूरी है, जिस पर ध्यान दिये बिना बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर के जीवन दर्शन की बात अधूरी रह जायेगी। बाबासाहेब कहते हैं–'आज भारत का आदमी दो अलग-अलग ध्येवाद से नियन्त्रित है। संविधान की प्रस्तावना में समाया ध्येवाद और धर्म में समाया ध्येवाद अपने जीवन दर्शन पर मेरा पूरा भरोसा है, इसलिए आज जो बहुसंख्य भारतीय लोगों का जो राजकीय ध्येवाद है, वह सभी का सामाजिक ध्येवाद हो, इस बात की मुझे उमीद है। ध्येवाद किसी व्यक्ति के जीवन का चर्म लक्ष्य होता है, जिससे किसी व्यक्ति के जीवन की दिशा तय होती है। अम्बेडकर वादी होने का मतलब डा. अम्बेडकर के ध्येवाद को अपनाना और उसे हासिल करना है। इसलिए आज के दलित आंदोलन के सामने संविधान की प्रस्तावना में दिए सामाजिक ध्येवाद के लिए काम करने के सिवाय कोई दूसरा काम नहीं है। इसलिए अब ब्राह्मणों को कोसना छोड़कर बाबासाहेब के इशारे पर संविधान में दिये ध्येवाद को प्राप्त करने के लिए एक-निष्ठ संघर्ष करना जरूरी है।

सामाजिक एवं धार्मिक योगदान

मानवाधिकार जैसे दलितों एवं दलित आदिवासियों के मंदिर प्रवेश, पानी पीने, छुआछूत, जातिपाति, ऊँच-नीच जैसी सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के लिए मनुस्मृति दहन (1927), महाड सत्याग्रह (वर्ष 1928), नाशिक सत्याग्रह

(वर्ष 1930), येवला की गर्जना (वर्ष 1935) जैसे आंदोलन चलाये। बेजुबान शोषित और अशिक्षित लोगों को जगाने के लिए वर्ष 1927 से 1956 के दौरान मूक नायक, बहिष्कृत भारत, समता, जनता और प्रबुद्ध भारत नामक पांच साप्ताहिक एवं पाक्षिक पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया। कमजोर वर्गों के छात्रों को छात्रावासों, रात्रि स्कूलों, ग्रंथालयों तथा शैक्षणिक गतिविधियों के माध्यम से अपने दलित वर्ग शिक्षा समाज (स्था. 1924) के जरिये अध्ययन करने और साथ ही आय अर्जित करने के लिए उनको सक्षम बनाया। सन् 1945 में उन्होंने अपनी पीपुल्ब्स एजुकेशन सोसायटी के जरिए मुम्बई में सिद्वार्थ महाविद्यालय तथा औरंगाबाद में मिलिन्द महाविद्यालय की स्थापना की। बौद्धिक, वैज्ञानिक, प्रतिष्ठा, भारतीय संस्कृति वाले बौद्ध धर्म की 14 अक्टूबर 1956 को 5 लाख लोगों के साथ नागपुर में दीक्षा ली तथा भारत में बौद्ध धर्म को पुनर्स्ध्थापित कर अपने अंतिम ग्रंथ "द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा" के द्वारा निरंतर वृद्धि का मार्ग प्रशस्त किया।

जात पांत तोडक मंडल (वर्ष 1937) लाहौर, के अधिवेशन के लिये तैयार अपने अभिभाषण को "जातिभेद निर्मूलन" नामक उनके ग्रंथ ने भारतीय समाज को धर्मग्रंथों में व्याप्त मिथ्या, अंधविश्वास एवं अंधश्रद्धा से मुक्ति दिलाने का कार्य किया। हिन्दू विधेयक संहिता के जरिए महिलाओं को तलाक, संपत्ति में उत्तराधिकार आदि का प्रावधान कर उसके कार्यान्वयन के लिए वह जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे।

आर्थिक, वित्तीय और प्रशासनिक योगदान

भारत में रिजर्व बैंक आफ इण्डिया की स्थापना डॉ. अम्बेडकर द्वारा लिखित शोध ग्रंथ "रुपये की समस्या-उसका उदभव तथा उपाय" और "भारतीय चलन व बैकिंग का इतिहास" ग्रन्थों तथा "हिल्टन यंग कमीशन के समक्ष उनकी साक्ष्य" के आधार पर 1935 में हुई। उनके दूसरे शोध ग्रंथद "ब्रिटिश भारत में प्रांतीय वित्त का विकास" के आधार पर देश में वित्त आयोग की स्थापना हुई। कृषि में सहकारी खेती के द्वारा पैदावार बढाना, सतत विद्युत और जल आपूर्ति करने का उपाय बताया। औद्योगिक विकास, जलसंचय, सिंचाई, श्रमिक और कृषक की उत्पादकता और आय बढाना, सामूहिक तथा सहकारिता से प्रगत खेती करना, जमीन के राज्य स्वामित्व तथा राष्ट्रीयकरण से सर्वप्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी गणराज्य की स्थापना करना। सन 1945 में उन्होंने महानदी का प्रबंधन की बहुउददेशीय उपयुक्तता को परख कर देश के लिये जलनीति तथा

औद्योगिकरण की बहुउद्देशीय आर्थिक नीतियाँ जैसे नदी एवं नालों को जोड़ना, हीराकुण्ड बांध, दामोदर घाटी बांध, सोन नदी घाटी परियोजना, राष्ट्रीय जलमार्ग, केन्द्रीय जल एवं विद्युत प्राधिकरण बनाने के मार्ग प्रशस्त किये। सन 1944 में प्रस्तावित केन्द्रिय जल मार्ग तथा सिंचाई आयोग के प्रस्ताव को 4 अप्रैल 1945 को वाइसराय द्वारा अनुमोदित किया गया तथा बड़े बांधोंवाली तकनीकों को भारत में लागू करने हेतु प्रस्तावित किया। उन्होंने भारत के विकास हेतु मजबूत तकनीकी संगठन का नेटवर्क ढांचा प्रस्तुत किया। उन्होंने जल प्रबंधन तथा विकास और नैसर्गिक संसाधनों को देश की सेवा में सार्थक रुप से प्रयुक्त करने का मार्ग प्रशस्त किया।

संविधान तथा राष्ट्र निर्माणः

उन्होंने समता, समानता, बन्धुता एवं मानवता आधारित भारतीय संविधान को 2 वर्ष 11 महीने और 17 दिन के कठिन परिश्रम से तैयार कर 26 नवंबर 1949 को तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को सौंप कर देश के समस्त नागरिकों को राष्ट्रीय एकता, अखंडता और व्यक्ति की गरिमा की जीवन पद्धति से भारतीय संस्कृति को अभिभूत किया। वर्ष 1951 में महिला सशक्तिकरण का हिन्दू संहिता विधेयक पारित करवाने में प्रयास किया और पारित न होने पर स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री के पद से इस्तीफा दिया। वर्ष 1955 में अपना ग्रंथ "भाषाई राज्यों पर विचार" प्रकाशित कर आन्ध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र को छोटे-छोटे और प्रबंधन योग्य राज्यों में पुनर्गठित करने का प्रस्ताव दिया था, जो उसके 45 वर्षों बाद कुछ प्रदेशों में साकार हुआ।

बाबा साहेब ने संविधान में इन सब का समावेश किया जैसे–निर्वाचन आयोग, योजना आयोग, वित्त आयोग, महिला पुरुष के लिये समान नागरिक हिन्दू संहिता, राज्य पुनर्गठन, बडे आकार के राज्यों को छोटे आकार में संगठित करना, राज्य के नीति निर्देशक तत्व, मौलिक अधिकार, मानवाधिकार, काम्पट्रोलर व ऑडीटर जनरल, निर्वाचन आयुक्त तथा राजनीतिक ढांचे को मजबूत बनाने वाली सशक्त, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं विदेश नीति बनाई। प्रजातंत्र को मजबूती प्रदान करने के लिए राज्य के तीनों अंगों न्यायपालिका, कार्यपालिका एवं विधायिका को स्वतंत्र और पृथक बनाया तथा समान नागरिक अधिकार के अनुरूप एक व्यक्ति, एक मत और एक मूल्य के तत्व को प्रस्थापित किया।

विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका में अनुसूचित जाति एवं जनजाति

के लोगों की सहभागिता संविधान द्वारा सुनिश्चित की तथा भविष्य में किसी भी प्रकार की विधायिकता जैसे ग्राम पंचायत, जिला पंचायत, पंचायत राज इत्यादि में सहभागिता का मार्ग प्रशस्त किया। सहकारी और सामूहिक खेती के साथ-साथ उपलब्ध जमीन का राष्ट्रीयकरण कर भूमि पर राज्य का स्वामित्व स्थापित करने तथा सार्वजनिक प्राथमिक उद्यमों यथा बैंकिंग, बीमा आदि उपक्रमों को राज्य नियंत्रण में रखने की पुरजोर सिफारिश की तथा कृषि की छोटी जोतों पर निर्भर बेरोजगार श्रमिकों को रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करने के लिए उन्होंने औद्योगीकरण की सिफारिश की जिसका सार्थक परिणाम आप के सामने है ।

शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा एवं श्रम कल्याणः

बाबा साहेब ने वायसराय की कौंसिल में श्रम मंत्री की हैसियत से श्रम कल्याण के लिए श्रमिकों की 12 घण्टे से घटाकर 8 घण्टे कार्य-समय, समान कार्य समान वेतन, प्रसूति अवकाश, सवैतनिक अवकाश, कर्मचारी राज्य बीमा योजना, स्वास्थ्य सुरक्षा, कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम 1952 बनाना, मजदूरों एवं कमजोर वर्ग के हितों के लिए तथा सीधे सत्ता में भागीदारी के लिए स्वतंत्र मजदूर पार्टी का गठन कर 1937 के मुम्बई प्रेसिडेंसी चुनाव में 17 में से उन्ह्होंने 15 सीटें जीतीं। कर्मचारी राज्य बीमा के तहत स्वास्थ्य, अवकाश, अपंग-सहायता, कार्य करते समय आकस्मिक घटना से हुये नुकसान की भरपाई करने और अन्य अनेक सुरक्षात्मक सुविधाओं को श्रम कल्याण में शामिल किया। कर्मचारियों को दैनिक भत्ता, अनियमित कर्मचारियों को अवकाश की सुविधा, कर्मचारियों के वेतन श्रेणी की समीक्षा, भविष्य निधि, कोयला खदान तथा माईका खनन में कार्यरत कर्मियों को सुरक्षा संशोधन विधेयक सन 1944 में पारित करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सन 1946 में उन्होंने निवास, जल आपूर्ति, शिक्षा, मनोरंजन, सहकारी प्रबंधन आदि से श्रम कल्याण नीति की नींव डाली तथा भारतीय श्रम सम्मेलन की शुरूआत की जो अभी निरंतर जारी है, जिसमें प्रतिवर्ष मजदूरों के ज्वलंत मुद्दों पर प्रधानमंत्री की उपस्थिति में चर्चा होती है और उसके निराकरण के प्रयास किये जाते है। श्रम कल्याण निधि के क्रियान्वयन हेतु सलाहकार समिति बनाकर उसे जनवरी 1944 में अंजाम दिया।

बाबा साहेब ने भारतीय सांख्यिकी अधिनियम पारित कराया ताकि श्रम की दशा, दैनिक मजदूरी, आय के अन्य स्रोत, मुद्रस्फीति, ऋण, आवास, रोजगार, जमापूंजी तथा अन्य निधि व श्रम विवाद से संबंधित नियम सम्भव कर दिया। नवंबर 8,1943 को उन्होंने 1926 से लंबित भारतीय श्रमिक अधिनियम को

सक्रिय बनाकर उसके तहत भारतीय श्रमिक संघ संशोधन विधेयक प्रस्तावित किया और श्रमिक संघ को सख्ती से लागू कर दिया। स्वास्थ्य बीमा योजना, भविष्य निधि अधिनियम, कारखाना संशोधन अधिनियम, श्रमिक विवाद अधिनियम, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और विधिक हडताल के अधिनियमों को श्रमिकों के कल्याणार्थ निर्माण किया।

डॉ. अम्बेडकर समाज में तथाकथित अछूतों को समानता का अधिकार दिलाना चाहते थे। वे उनकी आर्थिक हालत सुधारने के लिए संकल्प ले चुके थे, इतिहास की सच्ची जानकारी देने के लिए उन्होंने "शुद्र कौन थे?" नामक पुस्तक लिखी, जो बहुत ही लोकप्रिय हुई। भारत के वाइसराय ने उनकी योग्यता से प्रभावित होकर उन्हें अपने सचिव मंडल का सदस्य बनाया.15 अगस्त 1947 में भारत के स्वतंत्र होने पर वे संविधान-सभा के सदस्य चुने गए। संविधान का प्रारूप उन्हीं की अध्यक्षता में तैयार हुआ। उन्होंने तथाकथित अछूतों को समानता का अधिकार दिलाया। संविधान निर्माण में बाबा साहब ने अभूतपूर्व परिश्रम किया। 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र भारत की प्रथम सरकार बनी, डॉ. अम्बेडकर को इस सरकार में कानून मंत्री का पद सौंपा गया था, वे भारत के पुराने कानूनों में कई प्रकार से सुधार लाना चाहते थे किन्तु प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से उनका मतभेद हो गया इसलिए सन 1951 में उन्होंने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया.सरकार से अलग होते ही वे पूरी शक्ति से समाज सेवा में जुट गए, लोग उन्हें देवता की तरह पूजने लगे, वे जहाँ भी जाते थे, 'जय भीम' के नारों से सारा आकाश गूँज उठता था। उन्होंने सन 1955 में भारतीय बौद्ध महासभा की स्थापना भी कर डाली और बौद्ध धर्म स्वीकार लिया। इस घटना से हिंदू समाज में बड़ी खलबली-सी मच गई। दुर्भाग्य से 6 दिसम्बर 1956 को अचानक लाखों पीड़ितों को छोड़कर बाबा साहेब इस दुनिया से अलविदा हो गये जिसका दुःख आज भी दलितों में दिखाई देता है बाबासाहेब आज भी जिन्दा है क्योंकि उनका इतिहास आज भी जिन्दा हैं।

संदर्भ :

1. डॉ. अम्बेडकर जीवन दर्शन विजय कुमार पुरी
2. युग पुरुष बाबा साहेब भीम राव आंबेडकर का जीवन संघर्ष एवम राष्ट्र शंकरानंद शास्त्री
3. डॉ. अम्बेडकर जीवन दर्शन : चंदर कान्त मुगले
4. संविधान निर्माण एवम उसके निर्माता एस.एस. गोतम

5. आंबेडकर के प्रजातांत्रिक विचार, डॉ. सन्देश माघ राव वाध
6. गाँधी आंबेडकर और दलित, डॉ. महेश्वर दत
7. डॉ. आंबेडकर के प्रशसनिक विचार डॉ. धर्मबीर
8. डॉ. आंबेडकरसंपूर्ण वाड्मय खंड 2, सम्पादक श्याम सिंह शशि
9. डॉ. आंबेडकर कलम का कमाल संपूर्ण वाड्मय भाग 2-एल आर बाली
10. उत्तर आंबेडकर दलित आन्दोलन : दशा और दिशा आनंद तेल तुमडे
11. Kamrajsindhu-kuk@gmail.com

□

अम्बेडकर
का
सामाजिक सरोकार

सम्पादक :
डॉ कामराज सिन्धु

अम्बेडकर
का
सामाजिक सरोकार

सम्पादक :
डॉ कामराज सिन्धु
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

विषय सूची

अम्बेडकर के सामाजिक विचार और लोकतंत्र का भविष्य	डॉ. पी. आर. मीना	10
अम्बेडकर: राष्ट्र विरोधी या हितैषी	डॉ. रोहताष जमदाग्नि	21
डॉ. भीम राव अम्बेडकर का दलित दर्शन	डॉ. कामराज सिन्धु	42
बाबा साहब और भारत में समाज सुधार	डॉ. ममता रानी	48
अम्बेडकर चिंतन और जाति-प्रथा	प्रियंका सिंह	54
हिन्दी साहित्य में दलित चेतना	डॉ. मोनिका देवी	58
बाबा साहेब की पत्रकारिता: सामाजिक उत्थान की प्रेरणा का कर्त्तव्यबोध	डॉ. पप्पू कटारिया	63
डॉ. अम्बेडकर की श्रम सदस्य के रूप में भूमिका	संजय कुमार	76
सामाजिक प्रतिबद्धता और डॉ. अम्बेडकर का राष्ट्र	सुमित कुमार चौधरी	86
दलित साहित्य पर अम्बेडकर का प्रभाव	डॉ. स्नेहलता	92
अपृश्यता के विरुद्ध बाबा साहेब अंबेडकर का संघर्ष	सतीश कुमार भारद्वाज	100
Ambedkar's Critique of The Caste System	Miss Pinki	107
Ambedkarism in Contemporary India: Challenges and appropriation of Ambedkarism	Kavita Chauhan	113
Dr. Ambedkar's Notion of Social Justice in Modern Indian Society	Preeti Yadav	126
Dr. Ambedkar's Contribution in the Indian Society	Rakesh Chander, Mukesh	135
Insight into Life of Dr. B.R. Ambedkar His Thoughts and Present Situation of Scheduled Castes and Scheduled Tribes in Indian - An Introspection	Sree Krishna Bharadwaj H.	141
Dr. B.R. Ambedkar and Women Empowerment in Indian	Dr. Sunita Pareek	150
B.R. Ambedkar and Social Justics	Rashmi Devi, Urmila	159
Readefining Ambedkarism in Contemporary India: Issues and Challenges	Vani Tyagi	167
Dr. Ambedkar and Casteism in Indian Society	Mrs. Kavita	173

डॉ. भीम राव आंबेडकर का दलित दर्शन

डॉ. कामराज सिन्धु

बीसवीं सदी भारत के इतिहास की महत्व पूर्ण सदी हैं, इस सदी में जीवन का कोई ऐसा पक्ष नहीं था जिसमे परिवर्तनकारी कार्य न हुए हों। अंग्रेजो से राजनैतिक आजादी की अंतिम लड़ाई इसी सदी में लड़ी गई । इसी सन्दर्भ में आंबेडकर का आधुनिक भारत के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं ।उनके समय में इस बात पर गोर किया गया था कि अम्बेडकर ने भारत की सबसे दलित पीड़ित और शोषित जातियों को लड़ाई लड़ी थी । आंबेडकर ने हिन्दुओं और मुसलमानों द्वारा अंग्रेजो से लड़ी जा रही राजनैतिक सता की लड़ाई लड़ी और दलितों को उनके हक दिलवाने का कम किया । भीमराव रामजी आम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 में मृहु (मध्यप्रदेश) हुआ था। वे रामजी मालोजी सकपाल और भीमाबाई मुरबाद्दकर की 14वीं व अंतिम संतान थे। उनका परिवार मराठी था और वो अंबावडे नगर जो आधुनिक नगर महाराष्ट्र के रत्नागिरी ज़िले में है, से संबंधित था। भीमराव आम्बेडकर का जन्म निम्न वर्ण की महार जाति में हुआ था। उस समय अंग्रेज़ निम्न वर्ग की जातियों से नौजवानों को फ़ौज में भर्ती कर रहे थे। आम्बेडकर के पूर्वज लंबे समय तक ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना में कार्यरत थे और भीमराव के पिता रामजी आम्बेडकर ब्रिटिश फ़ौज में सूबेदार थे और कुछ समय तक एक फ़ौजी स्कूल में अध्यापक भी रहे। उनके पिता ने मराठी और अंग्रेज़ी में औपचारिक शिक्षा की डिग्री प्राप्त की थी।. अम्बेडकर का सम्पूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था । अस्पृश्यों तथा दलितों के वे मसीहा के रूप में जाने जाते हैं । उन्होंने सदियों से पद–दलित वर्ग को सम्मानपूर्वक जीने के लिए एक स्पष्ट मार्ग प्रदान किया।

आंबेडकर का पूरा जीवन दलितों के विरूद्ध होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति प्रदान करने का रहा। उनके अनुसार सामाजिक प्रताड़ना राज्य द्वारा दिए जाने वाले दण्ड से भी कहीं अधिक दुःख दाई थी। उन्होंने प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का विशद अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा भी की कि भारतीय समाज में वर्ण–व्यवस्था, जाति प्रथा तथा अस्पृश्यता का प्रचलन समाज में कालान्तर में आई विकृतियों के कारण उत्पन्न हुआ है, न कि यहां के समाज में प्रारम्भ से ही विद्यमान था । उन्होंने दलित

वर्ग पर होने वाले अन्याय का ही विरोध नहीं किया अपितु उनमें आत्म–गौरव, स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, आत्म सुधार तथा आत्म विश्लेषण करने की शक्ति प्रदान की । दलित उद्धार के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास किसी भी दृष्टिकोण से आधुनिक भारत के निर्माण में भुलाये नहीं जा सकते । पं. नेहरू के शब्दों में 'डॉ. अम्बेडकर, हिन्दू समाज की दमनकारी प्रवृत्तियों के विरूद्ध किए गए विद्रोह का प्रतीक थे । 'आंबेडकर अनुसूचित जाति समुदाय के पहले नेता थे। जिन्होंने दलितों के उद्धार के लिए कार्य किया।

आंबेडकर का मानना है कि हर व्यक्ति का अपना जीवन–दर्शन होना चाहिए, क्योंकि हर व्यक्ति के पास ऐसा मानक होना चाहिए,वह अपने चरित्र को माप सके। यह दर्शन कुछ और नहीं, चरित्र मापने का एक मानक है। सकारात्मक रूप से मेरे सामाजिक दर्शन को मात्र तीन शब्दों में बतलाया जा सकता है :स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व। मेरे दर्शन का आधार धर्म में है, राजनीति विज्ञान में नहीं। मैंने इसे महात्मा बुद्ध के उपदेशों से लिया है। उन्हें मैं अपना गुरु मानता हूँ। उनके दर्शन में स्वतंत्रता तथा समानता का अपना एक स्थान है, लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि असीमित स्वतंत्रता समानता को नष्ट कर देती है तथा पूर्ण समानता से स्वतंत्रता का हनन होता है । कुछ समय बाद आम्बेडकर ने 'ऑल इण्डिया क्लासेस एसोसिएशन' का संगठन किया। दक्षिण भारत में बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में गैर–ब्राह्मणों ने 'दि सेल्फ रेस्पेक्ट मूवमेंट' प्रारम्भ किया जिसका उद्देश्य उन भेदभावों को दूर करना था जिन्हें ब्राह्मणों ने उन पर थोप दिया था। सम्पूर्ण भारत में दलित जाति के लोगों ने उनके मन्दिरों में प्रवेश–निषेध एवं इस तरह के अन्य प्रतिबन्धों के विरुद्ध अनेक आन्दोलनों का सूत्रपात किया। परन्तु विदेशी शासन काल में अस्पृश्यता विरोधी संघर्ष पूरी तरह से सफल नहीं हो पाये। विदेशी शासकों को इस बात का भय था कि ऐसा होने से समाज का परम्परावादी एवं रूढ़िवादी वर्ग उनके विरोधी उत्तर आयेगा । अतः क्रान्तिकारी समाज–सुधार का कार्य केवल स्वतन्त्र भारत की सरकार ही कर सकती थी। पुनः सामाजिक पुनरुद्धार की समस्या राजनीतिक एवं आर्थिक पुनरुद्धार की समस्याओं के साथ गहरे तौर पर जुड़ी हुई थी। जैसे, दलितों के सामाजिक पुनरुत्थान के लिए उनका आर्थिक पुनरुत्थान आवश्यक था सन् 1932 में पूना समझौते में गांधी और आम्बेडकर, आपसी विचार विमर्श के बाद एक मध्यमार्ग पर सहमत हुए। आम्बेडकर ने शीघ्र ही हरिजनों में अपना नेतृत्व स्थापित कर लिया और समाज में यह सन्देश जाये की आंबेडकर ने उस समय कई पत्रिकाओ का सम्पादन करके समाज में संदेश देने का काम किया ।

वह हरिजनों के लिए सरकारी विधान परिषदों में विशेष प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में भी सफल हुए। आम्बेडकर ने हरिजनों का पक्ष लेने के महात्मा गांधी के दावे को चुनौती दी और व्हॉट कांग्रेस ऐंड गांधी हैव डन टु दा अनटचेबल्स (सन् 1945) नामक लेख लिखा। सन् 1947 में आम्बेडकर भारत सरकार के क़ानून मंत्री बने। उन्होंने भारत के संविधान की रूपरेखा बनाने में प्रमुख भूमिका निभाई और भारत के सविधान निर्माण का काम भी किया , जिसमें उन्होंने अछूतों के साथ भेदभाव को प्रतिबंधित किया और चतुराई से इसे संविधान सभा द्वारा पारित कराया। सरकार में अपना प्रभाव घटने से निराश होकर उन्होंने सन् 1951 में त्यागपत्र दे दिया।

दलितों की शिक्षा, संघर्ष और संगठन में अम्बेडकर का विश्वास था कि दलितों के उत्थान में केवल उच्च वर्णो की सहानुभूति और सद्भावना ही पर्याप्त नहीं है । उनका मत था कि दलितों का तो वास्तव में तब उत्थान होगा जबकि वे स्वयं सक्रिय तथा जागृत होंगे । इसलिये उन्होंने घोषणा की कि शिक्षित बनो, आन्दोलन चलाओ और संगठित रहो । दलित वर्ग की शिक्षा के बारे में अम्बेडकर का मत था कि दलितों के अत्याचार तथा उत्पीड़न सहन करने तथा वर्तमान परिस्थितियों को सन्तोषपूर्ण मानकर स्वीकार करने की प्रवृति का अन्त करने के लिए उनमें शिक्षा का प्रसार आवश्यक है । शिक्षा के माध्यम से ही उन्हें इस बात का आभास होगा कि विश्व कितना प्रगतिशील है तथा वे कितने पिछड़े हुए है। उनका मानना था कि दलितों को अन्याय, अपमान तथा दबाव को सहन करने के लिए मजबूर किया जाता है । वे इस बात से दुखी थे कि दलित इस प्रकार की परिस्थितियों को बिना कुछ कहे स्वीकार कर लेते हैं । वे संख्या में अधिक होने के बावजूद उत्पीड़न को सहन कर लेते हैं, जबकि यदि एक अकेली चींटी पर भी पैर रख दिया जाए तो वह प्रतिरोध करते हुए काट डालती है । इन परिस्थितियों को समाप्त करने के लिए अम्बेडकर दलितों में शिक्षा के प्रसार को बहुत महत्वपूर्ण मानते थे । उन्हें केवल औपचारिक शिक्षा ही नहीं अपितु अनौपचारिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए ।

1920 के दशक में मुम्बई में एक बार बोलते हुए उन्होंने साफ–साफ कहा था जहाँ मेरे व्यक्तिगत हित और देशहित में टकराव होगा वहाँ मैं देश के हित को प्राथमिकता दूँगा, लेकिन जहाँ दलित जातियों के हित और देश के हित में टकराव होगा, वहाँ मैं दलित जातियों को प्राथमिकता दूँगा। वे अंतिम समय तक दलित–वर्ग के मसीहा थे और उन्होंने जीवनपर्यंत अछूतोद्धार के लिए कार्य किया। जब महात्मा गाँधी ने दलितों को अल्पसंख्यकों की तरह पृथक निर्वाचन

मंडल देने के ब्रिटिश नीति के ख़लिाफ़ आमरण अनशन किया। सन् 1927 में उन्होंने हिन्दुओं द्वारा निजी सम्पत्ति घोषित सार्वजनिक तालाब से पानी लेने के लिए अछूतों को अधिकार दिलाने के लिए एक सत्याग्रह का नेतृत्व किया। 1931 में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री को सम्बोधित करते हुए आम्बेडकर ने गोलमेज सम्मेलन में कहाः ब्रिटिश पार्लियामेंट और प्रवक्ताओं ने हमेशा यह कहा है कि वे दलित वर्गों के ट्रस्टी हैं। मुझे विश्वास है, कि यह बात सभ्य लोगों की वैसी झूठी बात नहीं है जो आपसी सम्बन्धों को मधुर बनाने के लिए कही जाती है। मेरी राय में किसी भी सरकार का यह निश्चित कर्तव्य होगा कि जो धरोहर उसके पास है, उसे वह गँवा न दे। यदि ब्रिटिश सरकार हमें उन लोगों की दया के भरोसे छोड़ देती है जिन्होंने हमारी खुशहाली की ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया, तो यह बहुत बड़ी गद्दारी होगी। हमारी तबाही और बर्बादी की बुनियाद पर ही ये लोग धनी और बड़े बने हैं।

इस व्यवस्था में कार्यकुशलता की हानि होती है, क्योंकि जातीय आधार पर व्यक्तियों के कार्यो का पूर्व में ही निर्धारण हो जाता है । यह निर्धारण भी उनके प्रशिक्षण अथवा वास्तविक क्षमता के आधार पर न होकर जन्म तथा माता पिता के सामाजिक स्तर के आधार पर होता है। इस व्यवस्था से सामाजिक स्थैतिकता पैदा होती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने वंशानुगत व्यवस्था का अपनी स्वेच्छा से परिवर्तन नहीं कर सकता। यह व्यवस्था संकीर्ण प्रवृतियों को जन्म देती है, क्योंकि हर व्यक्ति अपनी जाति के अस्तित्व के लिए अधिक जागरूक होता है, अन्य जातियों के सदस्यों से अपने सम्बन्ध दृढ़ करने की कोई भावना नहीं होती है। नतीजन उनमें राष्ट्रीय जागरूकता की भी कमी उत्पन्न होती है। जाति के पास इतने अधिकार हैं कि वह अपने किसी भी सदस्य से उसके नियमों की उल्लंघना पर दण्डित या समाज से बहिष्कृत कर सकती है। अन्तर्जातीय विवाह इस व्यवस्था में निषेध होते हैं। सामाजिक विद्वेष और घृणा का प्रसार इस व्यवस्था की सबसे बुरी विशेषता है । इस प्रकार अम्बेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि जाति–व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विकृति है, जिसके दुखभाव समाज के लिए बहुत ही घातक हैं। जाति व्यवस्था के कारण लोगों में एकता की भावना का अभाव है, अतः भारतीयों का किसी एक विषय पर जनमत तैयार नहीं हो सकता। समाज कई भागों में विभक्त हो गया। उनके अनुसार जाति व्यवस्था न केवल हिन्दू समाज को दुष्प्रभावित नहीं किया अपितु भारत के राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक जीवन में भी जहर घोल दिया । उनका विश्वास था कि बौद्ध धर्म सामाजिक असमानता को समाप्त कर भ्रातृत्व

की भावना विकसित करता है । यही कारण था कि सन् 1956 में वह नागपुर में एक समारोह में अपने दो लाख दलित साथियों के साथ हिन्दू धर्म त्यागकर बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था ,क्योंकि छुआछूत आज भी हिन्दू धर्म का अंग बनी हुई हैं। महात्मा गांधी का यह दृढ़ विश्वास था कि धर्म परिवर्तन करने मात्र से दलित वर्गों की स्थिति में वास्तविक सुधार होगा ही, इसकी कोई निश्चितता नहीं है। 1941 और 1945 के बीच में उन्होंने बड़ी संख्या में अत्यधिक विवादास्पद पुस्तकें और पर्चे प्रकाशित किये जिनमे थॉट्स ऑन पाकिस्तान भी शामिल है, जिसमें उन्होंने मुस्लिम लीग की मुसलमानों के लिए एक अलग देश पाकिस्तान की माँग की आलोचना की। 'वॉट कॉंग्रेस एंड गांधी हैव डन टू द अनटचेबल्स' (काँग्रेस और गान्धी ने अछूतों के लिये क्या किया) के साथ, आम्बेडकर ने गांधी और कांग्रेस दोनों पर अपने हमलों को तीखा कर दिया उन्होंने उन पर ढोंग करने का आरोप लगाया। उन्होंने अपनी पुस्तक 'हू वर द शुद्राज़(शुद्र कौन थे)? के द्वारा हिन्दू जाति व्यवस्था के पदानुक्रम में सबसे नीची जाति यानी शुद्रों के अस्तित्व में आने की व्याख्या की। उन्होंने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि किस तरह से अछूत, शुद्रों से अलग हैं। आम्बेडकर ने अपनी राजनीतिक पार्टी को अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन में बदलते देखा, हालांकि 1946 में आयोजित भारत के संविधान सभा के लिए हुये चुनाव में इसने ख़राब प्रदर्शन किया। 1948 में हू वर द शुद्राज़ ? की आत्मकथा 'द अनटचेबलसः ए थीसिस ऑन द ओरिजन ऑफ अनटचेबिलिटी (अस्पृश्यः अस्पृश्यता के मूल पर एक शोध)' में आम्बेडकर ने हिन्दू धर्म को लताड़ा। आम्बेडकर इस्लाम और दक्षिण एशिया में उसकी रीतियों के भी आलोचक थे। उन्होंने भारत विभाजन का तो पक्ष लिया पर मुस्लिम समाज में व्याप्त बाल विवाह की प्रथा और महिलाओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार की घोर निंदा की। डॉक्टर आम्बेडकर को सन् 1990 में मरणोपरांत भारत रत्न से सम्मानित किया गय । 6 दिसंबर 1956 को आम्बेडकर की मृत्यु हो गई। 7 दिसंबर को चौपाटी समुद्र तट पर बौद्ध शैली में अंतिम संस्कार किया गया जिसमें सैकड़ों हज़ारों समर्थकों, कार्यकर्ताओं और प्रशंसकों भाग लिया।

संदर्भ :–

1. डॉ आंबेडकर संपूर्ण खंड 1प्रधान सम्पादक डॉ. स्याम सिंह शशि
2. डॉ आंबेडकर संपूर्ण खंड 2 प्रधान सम्पादक डॉ. स्याम सिंह शशि
3. डॉ आंबेडकर संपूर्ण खंड 3प्रधान सम्पादक डॉ. स्याम सिंह शशि
4. डॉ आंबेडकर संपूर्ण खंड 4 प्रधान सम्पादक डॉ. स्याम सिंह शशि

5. आंबेडकर के प्रसासनिक विचार डॉ धर्मबीर
6. गाँधी ,आंबेडकर और दलित डॉ महेश्वरदत
7. डॉ आंबेडकर कलम का कलम दृएल .आर बाली
8. दलित पैन्थर आन्दोलन –अजय कुमार
9. डॉ. बाबा साहब आम्बेडकर राइटिंग्स एंड स्पीचेज
10. डॉ आंबेडकर और दलित आन्दोलन डॉ धर्मबीर

दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय
कुरुक्षेत्र विश्वविधालय, कुरुक्षेत्र
kamrajsindhu.kuk@gmail.com

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता

संपादक
डॉ. कमलकिशोर गुप्ता

श्री बालाजी प्रकाशन, नागपुर

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता

संपादक
डॉ. कमलकिशोर एस. गुप्ता

श्री बालाजी प्रकाशन, नागपुर

१५.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तुलसी कृत साहित्य का योगदान **डॉ. प्रगति जयंत गुप्ता**	98
१६.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता **प्रकाश कुमार पोद्दार**	103
१७.	कोरोना संकटकाल में संत काव्य की प्रासंगिकता **प्रो. मृदुला जुगरान – डॉ अशोक दत्त नौटियाल**	110
१८.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता: गोस्वामी तुलसीदास जी के संदर्भ में **समीर सक्सैना**	116
१९.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कबीर की प्रासंगिकता **कैलाश कुमार गढावी**	125
२०.	सिखों के आदिगुरु गुरु नानक देव जी की समाज को देन **डॉ कामराज सिन्धु गुरूजी**	129
२१.	भक्ति आंदोलन और तुलसीदास का प्रदेय **डॉ. तीर्थराज राय**	134
२२.	श्रीराम कथा एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य : तुलसी के संदर्भ में **डॉ. श्रीमती बी. नन्दा जागृत**	139
२३.	संत तुलसीदास: रामचरित मानस में नारी पाठ आधुनिक परिप्रेक्ष्य में **सुप्रिया सिंह**	144
२४.	आधुनिक भारतीय नवजागरण के अग्रदूत : कबीर **डॉ. नेहा कल्याणी**	151
२५.	सन्त कबीर के साहित्य की वर्तमान प्रासंगिकता **डॉ. कुसुम नेगी**	157
२६.	समाज की उलझनों को सुलझाने वाले संत कवि कबीर **डॉ. मधु वर्मा**	164
२७.	संत पीपा और कबीर का तुलनात्मक अध्ययन **डॉ. मनीषा चोरड़िया – अदिति गौड़**	169
२८.	'मानस का हंस' और तुलसी का चरित्र-विधान **डॉ. सुषमा कुमारी**	179
२९.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता **चित्राताई मनोहर जोशी**	183

सिखों के आदिगुरु गुरु नानक देव जी की समाज को देन

डॉ कामराज सिन्धु गुरूजी

भारत की पावन भूमि पर कई संत-महात्मा अवतरित हुए हैं, जिन्होंने धर्म से विमुख सामान्य मनुष्य में अध्यात्म की चेतना जागृत कर उसका नाता ईश्वरीय मार्ग से जोड़ा है। ऐसे ही एक अलौकिक अवतार गुरु नानकदेव जी हैं।कहा जाता है कि गुरु नानकदेवजी का आगमन ऐसे युग में हुआ जो इस देश के इतिहास के सबसे अंधेरे युगों में था। उनका जन्म १४६९ में लाहौर से ३० मील दूर दक्षिण-पश्चिम में तलवंडी रायभोय नामक स्थान पर हुआ जो अब पाकिस्तान में है। बाद में गुरुजी के सम्मान में इस स्थान का नाम ननकाना साहिब रखा गया।

उस समय के हालात बिलकुल भिन्न थे और कई कारणों से भिन्न-भिन्न संप्रदायों में और भी कट्टरता और बैर-विरोध की भावना पैदा हो चुकी थी। उस वक्त समाज की हालत बहुत बदतर थी। ब्राह्मणवाद ने अपना एकाधिकार बना रखा था। उसका परिणाम यह था कि गैर-ब्राह्मण को वेद शास्त्राध्यापन से हतोत्साहित किया जाता था। निम्न जाति के लोगों को इन्हें पढ़ना बिलकुल वर्जित था। इस ऊँच-नीच का गुरु नानकदेव पर बहुत असर पड़ा और उसका विरोध भी किया गुरुनानक जी कहते है कि ईश्वर की निगाह में सब समान हैं कोई भेद नहीं । ऊँच-नीच का विरोध करते हुए गुरु नानकदेव अपनी मुखवाणी 'जपुजी साहिब' में कहते हैं कि

'नानक उत्तम-नीच न कोई'

जिसका भावार्थ है कि ईश्वर की निगाह में छोटा-बड़ा कोई नहीं फिर भी अगर कोई व्यक्ति अपने आपको उस प्रभु की निगाह में छोटा समझे तो ईश्वर उस व्यक्ति के हर समय साथ है। यह तभी हो सकता है जब व्यक्ति ईश्वर के नाम द्वारा अपना अहंकार दूर कर लेता है। तब व्यक्ति ईश्वर की निगाह में सबसे बड़ा है और उसके समान कोई नहीं।

नीचा अंदर नीच जात, नीची हूं अति नीच।
नानक तिन के संगी साथ, वडियां सिऊ कियां रीस

समाज में समानता का नारा देने के लिए नानक देव ने कहा कि ईश्वर हमारा पिता है और हम सब उसके बच्चे हैं और पिता की निगाह में छोटा-बड़ा कोई नहीं होता। वही हमें पैदा करता है।

ISBN : 978-93-84855-13-0

गुरु नानक देव ने पित्तर-पूजा, तंत्र-मंत्र और छुआ-छूत की भी आलोचना की। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुरु नानक साहिब हिंदू और मुसलमानों में एक सेतु के समान हैं। हिंदू उन्हें गुरु एवं मुसलमान पीर के रूप में मानते हैं। हमेशा ऊँच-नीच और जाति-पाति का विरोध करने वाले नानक के सबको समान समझकर लंगर की शुरुआत की जहाँ एक ही पंक्ति में बैठ सब भोजन करे और किसी में भी भेद भाव की सोच न पैदा हो ।

गुरु नानक देव जी का अवतरण संवत् १५२६ में कार्तिक पूर्णिमा को माता तृप्ता देवी जी और पिता कालू खत्री जी के घर श्री ननकाना साहिब में हुआ। उनकी महानता के दर्शन बचपन से ही दिखने लगे थे।उन्होंने बचपन से ही रूढ़िवादिता के विरुद्ध संघर्ष की शुरुआत कर दी थी, जब उन्हें ११ साल की उम्र में जनेऊ धारण करवाने की रीत का पालन किया जा रहा था। जब पंडितजी बालक नानकदेव जी के गले में जनेऊ धारण करवाने लगे तब उन्होंने उनका हाथ रोका और कहने लगे- 'पंडितजी, जनेऊ पहनने से हम लोगों का दूसरा जन्म होता है, जिसको आप आध्यात्मिक जन्म कहते हैं तो जनेऊ भी किसी और किस्म का होना चाहिए, जो आत्मा को बांध सके। आप जो जनेऊ मुझे दे रहे हो वह तो कपास के धागे का है जो कि मैला हो जाएगा, टूट जाएगा, मरते समय शरीर के साथ चिता में जल जाएगा। फिर यह जनेऊ आत्मिक जन्म के लिए कैसे हुआ ? और उन्होंने जनेऊ धारण नहीं किया।'

अंतर मैल जे तीर्थ नावे तिसु बैंकुठ ना जाना
लोग पतीणे कछु ना होई नाही राम अजाना,

अर्थात सिर्फ जल से शरीर धोने से मन साफ नहीं हो सकता, तीर्थयात्रा की महानता चाहे कितनी भी क्यों न बताई जाए, तीर्थयात्रा सफल हुई है या नहीं, इसका निर्णय कहीं जाकर नहीं होगा। इसके लिए हरेक मनुष्य को अपने अंदर झाँककर देखना होगा कि तीर्थ के जल से शरीर धोने के बाद भी मन में निंदा, ईर्ष्या, धन-लालसा, काम, क्रोध आदि कितने कम हुए हैं।

सब ईश्वर के बंदे : एक बार कुछ लोगों ने नानक देव जी से पूछा- आप हमें यह बताइए कि आपके मताअनुसार हिन्दू बड़ा है या मुसलमान।उन्होंने उत्तर दिया-

अवल अल्लाह नूर उपाइया कुदरत के सब बंदे
एक नूर से सब जग उपजया को भले को मंदे,

अर्थात सब बंदे ईश्वर के पैदा किए हुए हैं, न तो हिन्दू कहलाने वाला रब की निगाह में कबूल है, न मुसलमान कहलाने वाला। रब की निगाह में वही बंदा ऊंचा है जिसका अमल नेक हो, उसका आचरण सच्चा हो।

सेवा भाव – गुरु नानक देव जी जनता को जगाने के लिए और धर्म प्रचारकों को उनकी खामियाँ बतलाने के लिए अनेक तीर्थस्थानों पर पहुँचे और लोगों से धर्मांधता से दूर

रहने का आग्रह किया। उन्होंने पितरों को भोजन यानी मरने के बाद करवाए जाने वाले भोजन का विरोध किया और कहा कि मरने के बाद दिया जाने वाला भोजन पितरों को नहीं मिलता। हमें जीते जी ही माँ-बाप की सेवा करनी चाहिए।

मन का मैल धोने की सीख : एक बार नानक जी ने तीर्थ स्थानों पर स्नान के लिए इकट्ठे हुए श्रद्धालुओं को समझाते हुए कहा-

मन मैले सभ किछ मैला,
तन धोते मन अच्छा न होई,

अर्थात अगर हमारा मन मैला है तो हम कितने भी सुंदर कपड़े पहन लें, अच्छे-से तन को साफ कर लें, बाहरी स्नान, सुंदर कपड़ों से हम संसार को तो अच्छे लग सकते हैं मगर परमात्मा को नहीं, क्योंकि परमात्मा हमारे मन की अवस्था को देखता है।

सच्चा सौदा : उनके एक प्रसंग के अनुसार बड़े होने पर नानकदेव जी को उनके पिता ने व्यापार करने के लिए २० रु. दिए और कहा- 'इन २० रु. से सच्चा सौदा करके आओ। नानक देव जी सौदा करने निकले। रास्ते में उन्हें साधु-संतों की मंडली मिली। नानकदेव जी ने उस साधु मंडली को २० रु. का भोजन करवा दिया और लौट आए। पिताजी ने पूछा- क्या सौदा करके आए? उन्होंने कहा- 'साधुओं को भोजन करवाया। यही तो सच्चा सौदा है।' नानक जी ने लोगों को सदा ही नेक राह पर चलने की समझ दी। वे कहते थे कि कि साधु-संगत और गुरबाणी का आसरा लेना ही जिंदगी का ठीक रास्ता है। उनका कहना था कि ईश्वर मनुष्य के हृदय में बसता है, अगर हृदय में निर्दयता, नफरत, निंदा, क्रोध आदि विकार हैं तो ऐसे मैले हृदय में परमात्मा बैठने के लिए तैयार नहीं हो सकता है। अत: इन सबसे दूर रहकर परमात्मा का नाम ही हृदय में बसाया जाना चाहिए। सिख अनुयायी इन्हें 'गुरु नानक', 'बाबा नानक' और 'नानकशाह' नामों से संबोधित करते हैं।

एक और घटना है- नानक ग्रीष्म ऋतु की चिलचिलाती धूप में किसी ग्राम में गए। वहाँ वे गर्मी से बेहाल विश्राम करने के लिए बैठ गए। उन्हें कब नींद आ गई पता ही नहीं चला क्योंकि एक बड़े सर्प ने अपना फन फैलाकर उन्हें छाया प्रदान कर दी थी। गाँव वाले यह दृश्य देखकर स्तब्ध रह गए। गाँव के मुखिया ने उन्हें देवस्वरूप समझकर प्रणाम किया। तभी से नानक के नाम के आगे देव शब्द जुड़ गया। वे कालांतर में गुरु नानकदेव के नाम से विख्यात हुए।एक अन्य रोचक घटना में उनके पिता ने उन्हें गृहस्थ आश्रम की ओर ध्यानाकर्षित करने के लिए तत्कालीन नबाव लोदी खाँ के यहाँ नौकरी दिलवा दी। वहाँ उन्हें भंडार निरीक्षक की नौकरी प्राप्त हुई। परंतु नानक वहाँ भी साधु-संतों पर बेहिसाब खर्च करते रहे। इसकी शिकायत नवाब तक पहुँची तब उसने नानक के खिलाफ जाँच के आदेश दे दिए। परंतु आश्चर्य की बात यह थी कि उस जाँच में कोई कमी नहीं पाई गई। एक बार

ISBN : 978-93-84855-13-0

नानकदेव भ्रमण के दौरान मक्का पहुँचे। वह थकान के कारण काबा की ओर पैर करके सो गए। जब वहाँ के मुसलमानों ने यह दृश्य देखा तो वे अत्यधिक क्रोधित हुए। चमत्कार उस समय घटित हुआ जब लोग उनका पैर जिस दिशा में करते उन्हें उसी दिशा में काबा के दर्शन होते। यह देखकर सभी ने उनसे श्रद्धापूर्वक क्षमा माँगी। गुरु नानकदेव एक महान पवित्र आत्मा थे, वे ईश्वर के सच्चे प्रतिनिधि थे। आपने गुरुग्रंथ साहब नामक ग्रंथ की रचना की। यह ग्रंथ पंजाबी भाषा और गुरुमुखी लिपि में है। इसमें कबीर, रैदास व मलूकदास जैसे भक्त कवियों की वाणियाँ सम्मिलित हैं। ७० वर्षीय गुरुनानक सन १५३९ ई में अमरत्व को प्राप्त कर गए। परन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात भी उनके उपदेश और उनकी शिक्षा अमरवाणी बनकर हमारे बीच उपलब्ध हैं जो आज भी हमें जीवन में उच्च आदर्शों हेतु प्रेरित करती रहती हैं। सतगुरु नानक प्रगटिया, मिटी धुन्ध जग चानण होया सिख धर्म के महाकवि भाई गुरदासजी ने गुरु नानक के आगमन को अंधकार में ज्ञान के प्रकाश समान बताया।

गुरुनानक देवजी ने स्वयं किसी धर्म की स्थापना नहीं की। उनके बाद आये गुरुओं ने अपने समय की स्थितियों को देखकर सिख पंथ की स्थापना की। उनका उद्देश्य भी भारतीय धर्म और संस्कृति की रक्षा करना ही था। श्री गुरुनानक देव जी का जीवन सदैव समाज के उत्थान में बीता। उस समय का समाज अंधविश्वासों और कर्मकांडों के मकड़जाल में फँसा हुआ था। कहने को लोग भले ही समाज की रीतियाँ निभा रहे थे पर अपने धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिये उनके पास कोई ठोस योजना नहीं थी। इधर सामान्य लोग भी अपने कर्मकांडों में ऐसे लिप्त रहे कि उनके लिये कोई नृप हो हमें का हानि की नीति ही सदाबहार थी। ऐसे जटिल दौर में गुरुनानक देवजी ने प्रकट होकर समाज में आध्यात्मिक चेतना जगाने का जो काम किया, वह अनुकरणीय है। वैसे महान संत कबीर भी इसी श्रेणी में आते हैं। हम इन दोनों महापुरुषों का जीवन देखें तो न वह केवल रोचक, प्रेरणादायक और समाज के लिये कल्याणकारी है बल्कि सन्यास के नाम पर समाज से बाहर रहने का ढोंग करते हुए उसकी भावनाओं का दोहन करने वाले ढोंगियों के लिये एक आईना भी है।

निष्कर्ष – श्री गुरुनानक देवजी के सबसे निकटस्थ शिष्य मरदाना को माना जाता है जो कि जाति से मुसलमान थे। आप देखिये नानक देवजी के तप का प्रभाव कि मरदाना ने अपना पूरा जीवन गुरुनानकजी की सेवा में गुजारा। इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता कि मरदाना ने कभी अपना धर्म छोड़ने या पकड़ने का नाटक किया। सैंकड़ों साल पुराने सामाजिक सच, आज के सच हों, यह जरूरी नहीं है। अतः सत्य की खोज के लिए गतिशीलता एवं विवेक की अपेक्षा है। कर्तव्य एवं प्रगति से मुँह मोड़ लेने का संबंध धर्म–दर्शन या अध्यात्म से जोड़ना भ्रम है, अज्ञान का परिचायक है। भेड़ें मिमियाती भर हैं, झूठ नहीं बोलती, खरगोश किसी के साथ हिंसा नहीं करते, पर इतने मात्र से उन्हें सत्यवादी या अहिंसक नहीं कहा जा सकता। अंधे, बहरे और गूंगे न अशुभ देखते हैं, न अशुभ सुनते हैं और न अशुभ बोलते हैं फिर भी उन्हें धार्मिक या साधक नहीं

कहा जा सकता। क्योंकि धर्म स्वतंत्र चेतना से विवेक और वैराग्य के तटों के मध्य प्रवाहित होने वाला व पुरुषार्थ से प्रदीप्त ज्ञान ज्योति का निर्मल झरना है और इसी झरने को गुरुनानक देव ने प्रवाहित किया। उन्होंने परम चक्षु–अंतर्दृष्टि को जगा और श्रेष्ठताओं के संवर्धन हेतु विशिष्ट पराक्रम किया। इसका तात्पर्य यह है कि आध्यात्मिक विकास हेतु विवेकयुक्त पुरुषार्थ की नितांत अपेक्षा रहती है।

गुरुनानकजी का धर्म जड़ नहीं, सतत जागृति और चैतन्य की अभिक्रिया है। जागृत चेतना का निर्मल प्रवाह है। उनकी शिक्षाएं एवं धार्मिक उपदेश अनंत ऊर्जा के स्रोत हैं। शोषण, अन्याय, अलगाव और संवेदनशून्यता पर टिकी आज की समाज व्यवस्था को बदलने वाला शक्तिस्रोत वही है। धर्म के धनात्मक एवं गतिशील तत्व ही सभी धर्म क्राँतियों के नाभि केन्द्र रहे हैं। वे ही व्यक्ति और समाज के समन्वित विकास की रीढ़ हैं। ये व्यक्ति के शरीर, मन, प्राण और चेतना को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति, व्यक्ति का स्वस्थ तन, स्वस्थ मन और स्वस्थ जीवन ही स्वस्थ समाज की आधारशीला है और ऐसी ही स्वस्थ जीवन पद्धति एवं धर्म का निरुपण गुरुनानक देव ने किया है।

संदर्भ सूची –

१. गुरुनानक देव – नरेंद्र पाठक

२. नानक वाणी – जयराम मिश्र

३. गुरु नानक जीवनी युग एव शिक्षाएँ – डॉ जाकिर हुसैन

४. गुसाई गुरुवाणी – गौकुल चंद नारंग

५. सिखों का इतिहास – ठाकुर देशराज

६. संत वाणी – पांडेय श्री नारायण दत जी शास्त्री

७. व्यक्तित्व और कृतित्व – विजय मुनि

८. संत साहित्य की लौकिक पृष्ठ भूमि – डॉ ओम प्रकाश शर्मा

९. संत साहित्य के प्रेरणा स्त्रोत–आचार्य परशुराम चतुर्वेदी

१०. संत साहित्य पुनर्मूल्यांकन – डॉ राजदेव सिंह

११. संतों के धर्मिक विश्वास – डॉ धर्मपाल मैनी

डॉ कामराज सिन्धु गुरूजी

अध्यक्ष हिंदी विभाग, दूरवर्ती निदेशालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

21वीं सदी में

नारी-विमर्श

दशा और दिशा

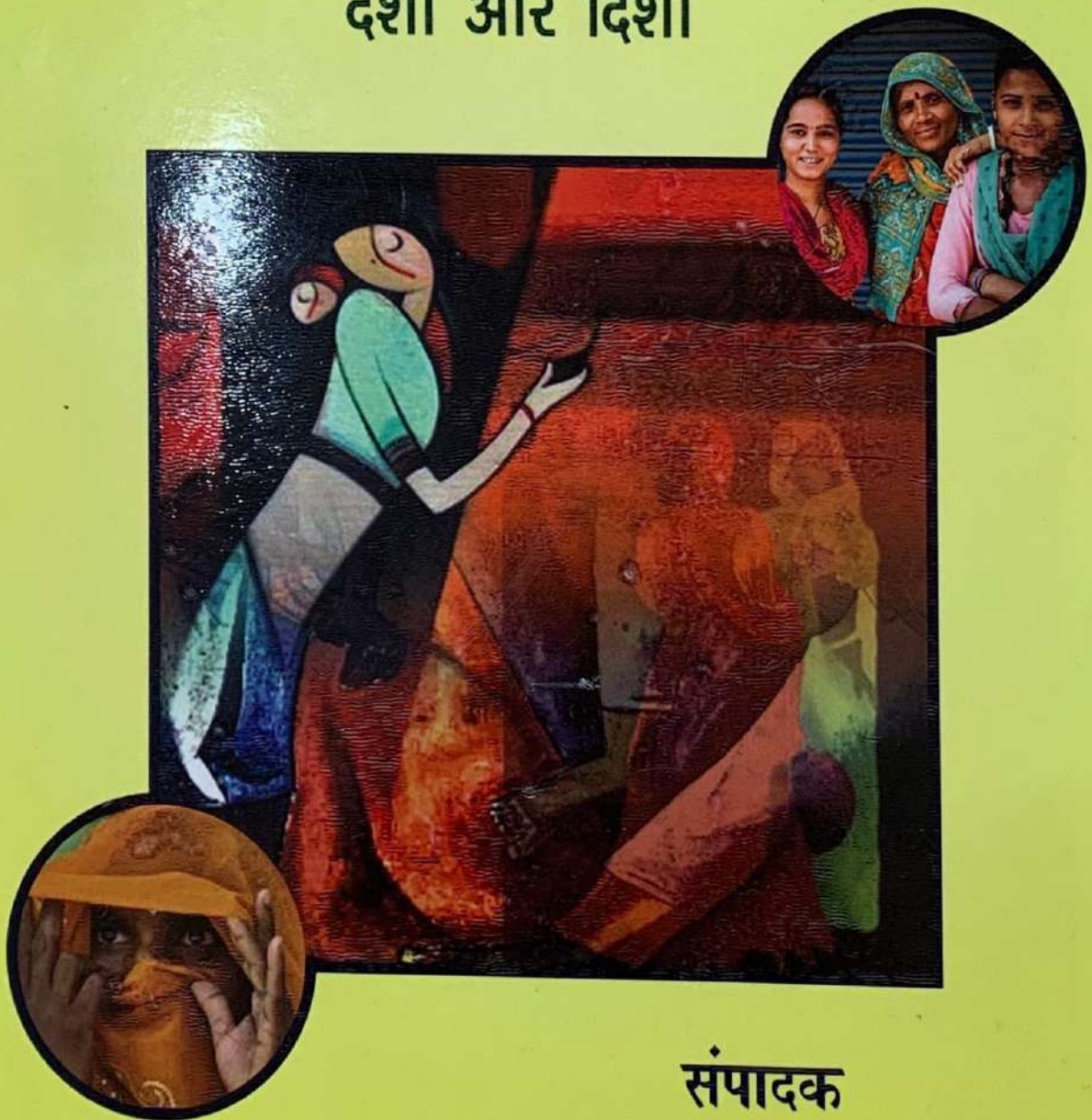

संपादक

डॉ. कामराज सिंधु (गुरु जी)

21वीं सदी में नारी-विमर्श

(दशा और दिशा)

संपादक

डॉ. कामराज सिंधु (गुरुजी)

अध्यक्ष हिंदी विभाग
दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय
कुरुक्षेत्र

संजय प्रकाशन

नई दिल्ली (भारत)

अनुक्रम

	अग्रेषित संदेश	*5*
	दो शब्द	*9*
1.	नारी विमर्श : दशा और दिशा / डॉ. विदुषी शर्मा	15
2.	21वीं सदी में नारी की वर्तमान दशा और सामाजिक सरोकार / डॉ कामराज सिन्धु	22
3.	'वर्तमान समाज में महिला सशक्तिकरण की अवधारणा' / डॉ. दिग्विजय शर्मा	28
4.	पुरुषसत्ता की परती जमीन को तोड़ने की कोशिश का नाम है–स्त्री विमर्श / डॉ. उर्मिला शुक्ल	36
5.	इक्कीसवीं सदी मे नारी की दशा और दिशा / नीरू रानी	45
6.	इक्कीसवीं सदी में नारी साहित्यकारों की भूमिका / डॉ. मोहर सिंह	53
7.	21वीं सदी में नारी की दशा और दिशा / पूनम रानी	61
8.	'21वीं सदी में नारी साहित्यकारों की भूमिका' / कमलेश	70
9.	चित्रा मुदगल–साहित्य में स्त्री की दशा और दशा / बबीता रानी	81
10.	हिंदी उपन्यास साहित्य में स्त्री विमर्श / मंजू नायर एस	89
11.	आज की स्त्री के सरोकार : शकुंतला के संदर्भ में / डॉ. नीलम राठी	92
12.	भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं मानवाधिकार / रजनी रानी	99

21वीं सदी में नारी की वर्तमान दशा और सामाजिक सरोकार

–डॉ कामराज सिन्धु

21वीं सदी में नारी ने सफलता की कहानी के कई आयामों को छुआ है। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी कामयाबी का परचम लहराते हुए पुरुषों के समकक्ष खड़ी ही नहीं बल्कि उनके वर्चस्व को भी चुनौती दे रही हैं। यहाँ चुनौती का मतलब अपनी मेहनत के बल पर उसने स्वयं की एक अलग अस्तित्व व पहचान बनाई। आज की नारी अपनी परंपरा के खोल को तोड़ कर नए-नए आयाम स्थापित करने में लगी हुई है। वे अब परंपरा व रीति-रिवाज के नाम पर किसी भी प्रकार का शोषण, दमन व अत्याचार सहन नहीं करती बल्कि अन्याय के खिलाफ पूरी ताकत के साथ संघर्ष करने को तैयार है। आज की जागरूक नारी दूसरी नारियों को भी जागरूक करने में लगी हुई है। उसकी लज्जा, शर्म, सहनशीलता का स्थान उसके अस्तित्व के होने की जद्दोजहद ने लिया। आज के बदलते हालात, समय, परिवेश, परिस्थितियों व वातावरण के आधार पर नारी की बदलती छवियों को विश्लेषित किया है।

किसी भी समाज एवं राष्ट्र की स्थिति को वहाँ की नारी की दशा को देखकर आँका जा सकता है। पुरातन काल के गौरवमयी सतयुगी समाज का श्रेय नारियों की उच्च स्थिति को दिया जा सकता है। वैदिक ग्रन्थों के अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि तब समाज में स्वतंत्रता एवं समानता की भावना ओतप्रोत थी, नारियों को हर स्तर पर सम्मान एवं श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता था। उन्हें पुरुषों के समान अवसर उपलब्ध थे एवं वे भी हर क्षेत्र में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती थी। गृहकार्यों से लेकर कृषि प्रशासन एवं यज्ञ कर्म से लेकर अध्यात्म

साधना तक वे कोई भी क्षेत्र उनके विशिष्ट व्यक्तित्व, प्रतिभा एवं कौशल की छाप से अछूते नहीं थे। अपनी बहुआयामी उपलब्धियों के आधार पर वे अपनी जाति के अन्दर संजीवनी शक्ति का संचार करती थी और अपने समाज व राष्ट्र को सशक्त एवं ऊँचा उठाने में अपना अमूल्य योगदान देती थी। वैदिक वाङ्मय में कहीं पुत्री तो कहीं भगिनी, कहीं पत्नी व कहीं माता के रूप में उसकी भूमिका एवं योगदान का उल्लेख आता है और कहीं-कहीं वह मंत्रद्रष्ट ऋषिका के रूप में अपना वर्चस्व प्रकट करती है।

पश्चिम के स्त्री आंदोलनों और स्त्री विमर्श से तुलना करते हुए कई बार हमारे योग्य विद्वान भारतीय परिप्रेक्ष्य में स्त्री संघर्ष की उपेक्षा कर जाते हैं–हिंदी के विमर्शात्मक लेखन पर भी इसी तरह का एक खास नजरिया चस्पां कर दिया गया है और उसका मूल्यांकन चंद लेखिकाओं के आधार पर करके एक सामान्य निष्कर्ष निकाल दिया जाता है–ऐसे में भारत के नारी -संघर्ष के इतिहास पर पुनर्विचार करना जरुरी है–नारी विमर्श एक वैश्विक विचारधारा है लेकिन विश्वभर की नारियों का संघर्ष उनके अपने समाज सापेक्ष है–इस सन्दर्भ में नारी संघर्ष और नारी विमर्श दोनों को थोड़ा अलग कर देखने की जरूरत है हाँलाकि दोनों अन्योन्याश्रित हैं–इसलिए किसी एक देश में किसी खास परिस्थिति में चलने वाला नारी संघर्ष एकमात्र सार्वभौमिक सत्य नहीं हो सकता है, प्रेरणास्रोत हो सकता है–हर देश का अपना अलग-अलग बुनियादी सामाजिक ढांचा है–ऐसे आन्दोलन वैश्विक विचारधारा के विकास में सहायक हो सकते हैं लेकिन यह जरुरी नहीं है कि हर आन्दोलन इस वैश्विक विचारधारा की सैद्धांतिकी को आधार बना कर चले–किसी एक मुद्दे को लेकर शुरू हुआ आन्दोलन अपनी चेतना में कई स्तरों पर न्याय की लड़ाई को समेटे रहता है–भारत में नारी संघर्ष और नारी अधिकार के आन्दोलन को इसी रूप में स्वतंत्रता आन्दोलन के परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है–

अगर देखा जाये तो वैदिक काल में किसी भी रूप में नारी पुरुष से कम नहीं थी। वे पुरुषों के समतुल्य समझी जाती थीं। यह भाव 'अर्धांगिनी' में भली-भाँति व्यक्त हो जाता है। 'दंपत्ति' शब्द में स्त्री-पुरुष दोनों के समान रूप से घर का स्वामी होने का भाव निहित है। पत्नी को अन्य कई शब्दों में सम्बोधित किया जाता था। जैसे–जाया, दारा, वासिता आदि, जो कि उसकी उच्चस्थिति को व्यक्त करते हैं। पति स्वयं (शुक्र रूप में) भार्या के गर्भ में प्रवेश करके पुत्र के रूप में जन्म लेता है। इस कारण उसे जाया की संज्ञा दी गयी।

'स्त्री पुरुष का आधा भाग, जब तक जाया प्राप्त नहीं होती, तब तक जीवन अपूर्ण रहता है। जब जाया प्राप्त होती है, तब स्वतः पति ही उसके सहारे उत्पन्न होता है'।

वैदिक जीवन पद्धति में धार्मिक क्षेत्र में नारी को उच्च स्थान प्राप्त था। वैदिक काल में धार्मिक क्रियाओं में यज्ञ को सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता था और पत्नी के अभाव में पति को यज्ञाधिकारी नहीं माना जाता था। ऋग्वेद व अथर्ववेद में नारी के अधिकार एवं कर्त्तव्यों की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि पत्नी के साथ बैठकर पति यज्ञार्थ स्रुवा लेकर यज्ञ करे (ऋ. 1/83/3)। अन्य मंत्रों में भी बताया गया है कि स्त्री प्रतिदिन घी और सामग्री लेकर प्रातः साँय यज्ञ करे। (ऋ. 7/116) शतपथ ब्राह्मण में अकेले पति को स्वर्गलोक की भी आकाँक्षा न करने को कहा गया है। वाजपेय यज्ञ में यज्ञीय यूप के सहारे सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ पति पत्नी से कहता है कि 'आओ, आओ हम दोनों साथ-साथ स्वर्गारोहण करें'।

आज साँस्कृतिक पुनरुत्थान की बेला में पुनः उसी स्वर्णिम इतिहास को दोहराया जाना है। शान्तिकुंज के तत्त्वावधान में चल रहे विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान के अंतर्गत नारी गायत्री साधना एवं यज्ञ कर रही हैं। अश्वमेध जैसे विराट् यज्ञ में वे ब्रह्मवादिनी की भूमिका निभा चुकी है। धीरे-धीरे वे समाज और जीवन के हर क्षेत्र में पदार्पण कर रही हैं। नारी जागृति की यह लहर वर्तमान 21 वीं सदी में नारी सदी के आदर्श को सार्थक साकार करके ही दम लेगी। ऐसा विश्वास किया जाना चाहिए।

इक्कीसवीं सदी महिला सदी है। वर्ष 2001 महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया। इसमें महिलाओं की क्षमताओं और कौशल का विकास करके उन्हें अधिक सशक्त बनाने तथा समग्र समाज को महिलाओं की स्थिति और भूमिका के संबंध में जागरूक बनाने के प्रयास किये गए। महिला सशक्तिकरण हेतु वर्ष 2001 में प्रथम बार "राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति" बनाई गई जिससे देश में महिलाओं के लिये विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत विशेषताएँ निर्धारित किया जाना संभव हो सके। इसमें आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पुरुषों के साथ समान आधार पर महिलाओं द्वारा समस्त मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का सैद्धान्तिक तथा वस्तुतः उपभोग पर तथा इन क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी व निर्णय स्तर तक समान पहुँच पर बल दिया गया है। भारत के आजाद होने के बाद महिलाओं की दशा

में काफी सुधार हुआ है। महिलाओं को अब पुरुषों के समान अधिकार मिलने लगे है। महिलाएं अब वे सब काम आजादी से कर सकती है जिन्हें वे पहले करने में अपने आप को असमर्थ महसूस करती थी। आजादी के बाद बने भारत के संविधान में महिलाओं को वे सब लाभ, अधिकार, काम करने की स्वतंत्रता दी गयी है जिसका आनंद पहले सिर्फ पुरुष ही उठाते थे। वर्षों से अपने साथ होते बुरे सुलूक के बावजूद महिलाएं आज अपने आप को सामाजिक बेड़ियों से मुक्त पाकर और भी ज्यादा आत्मविश्वास से अपने परिवार, समाज तथा देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए लगातार कार्य कर रही है।

हमारे देश की आधी जनसंख्या का प्रतिनिधित्व महिलाएं करती है। इसका मतलब देश की उन्नति का आधा दारोमदार महिलाओं पर और आधा पुरुषों के कंधों पर निर्भर करता है। हम अंदाजा भी नहीं लगा सकते उस समय का जब इसी आधी जनसंख्या को वे मूलभूत अधिकार भी नहीं मिल पाते थे जिनकी वे हक़दार है। उन्हें अपनी जिंदगी अपनी खुशी से जीने की भी आजादी नहीं थी। परन्तु बदलते वक़्त के साथ इस नए ज़माने की नारी ने समाज में वो स्थान हासिल किया जिसे देखकर कोई भी आश्चर्यचकित रह जायेगा। आज महिलाएं एक सफल समाज सुधारक, उधमी, प्रशासनिक सेवक, राजनायिका आदि है।

महिलाओं की स्थिति में सुधार ने देश के आर्थिक और सामाजिक सुधार के मायने भी बदल कर रख दिए है। दूसरे विकासशील देशों की तुलना में हमारे देश में महिलाओं की स्थिति काफी बेहतर है। यद्यपि हम यह तो नहीं कह सकते कि महिलाओं के हालात पूरी तरह बदल गए है पर पहले की तुलना में इस क्षेत्र में बहुत तरक्की हुई है। आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति पहले से अधिक सचेत है। महिलाएं अब अपनी पेशेवर जिंदगी (सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक) को लेकर बहुत अधिक जागरूक है जिससे वे अपने परिवार तथा रोजमर्रा की दिनचर्या से संबंधित खर्चों का निर्वाह आसानी से कर सके।

महिलायें अब लोकतंत्र और मतदान संबंधी कार्यो में भी काफी अच्छा काम कर रही है जिससे देश की प्रशासनिक व्यवस्था सुधर रही है। हर क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी दिन-प्रतिदिन बढती जा रही है। उदाहरण के तौर पर मतदान के दिन मतदान केंद्र पर हमें पुरुषों से ज्यादा महिलाओं की उपस्थिति नज़र आएगी। इंदिरा गाँधी, विजयलक्ष्मी पंडित, एनी बेसंट, महादेवी वर्मा, सुचेता कृपलानी, पी.टी उषा, अमृता प्रीतम, पदमजा नायडू, कल्पना चावला, राजकुमारी

अमृत कौर, मदर टेरेसा, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि कुछ ऐसे नाम जिन्होंने महिलाओं की जिंदगी के मायने ही बदल कर रख दिए है। आज नारी बेटी, माँ, बहन, पत्नी के रूप में अलग अलग क्षेत्र जैसे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शिक्षा, विज्ञान विभागों में अपनी सेवाएं दे रही है। वे अपनी पेशेवर जिंदगी के साथ-साथ पारिवारिक जिम्मेदारियों को भी बखूबी निभा रही है। महिलाओं की दशा सुधारने में इतना सब होने के बाद भी हमे कहीं-न-कहीं उनके मानसिक तथा शारीरिक उत्पीड़न से जुडी ख़बरें सुनने को मिल जाती है।

भारत सरकार ने हाल ही में महिला सुरक्षा से संबंधित कानूनों में महत्त्वपूर्ण बदलाव किया है। पुराने जुवेनाइल कानून 2000 को बदलते हुए नए जुवेनाइल जस्टिस (चिल्ड्रेन केयर एंड प्रोटेक्शन) बिल 2015 को लागू किया है। इसे खास-तौर पर निर्भया केस को ध्यान में रख कर बनाया गया है। इस कानून के अंतर्गत कोई भी किशोर जिसकी आयु 16 से 18 साल के बीच है और वह जघन्य अपराध में शामिल है तो उस पर कड़ी से कड़ी कार्यवाही की जा सकेगी। और इसी कड़ी में हरियाणा में तो 12 वर्ष में कानून में बदलाव किया गया है और सजा का भी प्रावधान किया गया है–

वर्तमान समय में भारतीय सरकार द्वारा नारी के उत्थान के लिए अनेक कार्यक्रम एवं योजनाओं का संचालन तो रहा हैं लेकिन इन योजनाओं का क्रियान्वयन निचले स्तर तक उचित ढंग से न पहुँच सकने के कारण नारी को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। यह सत्य है कि वर्तमान समय में नारी की स्थिति में काफी बदलाव आए हैं, लेकिन फिर भी वह अनेक स्थानों पर पुरुष-प्रधान मानसिकता से पीड़ित दिखाई दे रही है। इस सन्दर्भ में युगनायक एवं राष्ट्रनिर्माता स्वामी विवेकानन्द का यह कथन उल्लेखनीय है–"किसी भी राष्ट्र की प्रगति का सर्वोत्तम थर्मामीटर है, वहाँ की नारियों का उत्थान। हमें नारियों को ऐसी स्थिति में पहुँचा देना चाहिए, जहाँ वे अपनी समस्याओं को अपने ढंग से स्वयं सुलझा सकें। हमें नारीशक्ति के उद्धारक नहीं, बरन् उनके सेवक और सहायक बनना चाहिए। भारतीय नारियाँ संसार की अन्य किन्हीं भी नारियों की भाँति अपनी समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखती हैं। आवश्यकता है उन्हें उपयुक्त अवसर देने की। इसी आधार पर भारत के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ सन्निहित हैं।

निष्कर्ष : 21वीं सदी में नारी विकास और स्वतन्त्रता की राह पर आगे बढ़ चुकी है और समाज को एक नई दिशा देने का काम कर रही है। बेहतरीकरण

के लिए हम सबको अपनी कुत्सित एवं रूढ़िवादी मानसिकता से बाहर निकलना होगा। उन्हें सम्मान के साथ-साथ शिक्षा, व्यवसाय, नौकरी व अन्य सभी स्थानों पर बराबरी का अधिकार भी देना होगा। गौरतलब है कि भारतीय महिलाएँ राष्ट्र की प्रगति में अपना अधिकाधिक योगदान देकर राष्ट्र को शिखर पर पहुंचाने हेतु सदैव तत्पर रही हैं। सच पूछो तो नारी शक्ति ही सामाजिक धुरी और हम सबकी वास्तविक आधार हैं। महिलाओं के उत्थान के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही नीतियों में पूर्ण सहयोग देकर उसको परिणाम तक पहुंचाना होगा। युगनायक एवं राष्ट्र निर्माता स्वामी विवेकानंद जी ने कहा था–"जो जाति नारियों का सम्मान करना नहीं जानती, वह न तो अतीत में उन्नति कर सकी, न आगे उन्नति कर सकेगी।" हमें भारतीय सनातन संस्कृति के "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" धारणा को साकार करते हुए महिलाओं को आगे बढ़नें में सदैव सहयोग करना चाहिए।

संदर्भ :

1. डॉ राजकुमार-नारी के बदले आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस 2005
2. कमलेश गुप्ता कुमार, महिला सशक्तिकरण, बुक एनक्लेव, जयपुर
3. करण सिंह बहादुर, महिला अधिकार व सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, मार्च 2006
4. सुरेश लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय महिला आयोग, कुरूक्षेत्र, मार्च 2007
5. हरेन्द्र गोतम राज, महिला अधिकार संरक्षण, कुरूक्षेत्र मार्च 2006
6. जय प्रकाश व्यास,, नारी शोषण, ज्ञानदा प्रकाशन, 2003
7. हसनैन, नदीम समकालीन भारतीय समाज, (2004) भारत बुक सेन्टर, लखनऊ।
8. पुष्पा जोशी गांधी आन वोमन, सेन्टर फार वोमन'स डेवलपमेन्ट स्टडीज, (1998) दिल्ली,
9. डॉ राजनारायण, स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन
10. डॉ॰ यादव वीरेंद्र सिंह, हिंदी कथा साहित्य में पारिवारिक विघटन, वर्ष (2010), नमन प्रकाशन, नई दिल्ली
11. शर्मा यादवेंद्र 'चंद्र', वाह किन्नी, वाह (कहानी संग्रह), वर्ष (2009), वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
12. अनीता गोपेश, कित्ता पानी (कहानी संग्रह), वर्ष (2009), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
14. जैमिनी अंजु दुआ, क्या गुनाह किया (कहानी संग्रह), वर्ष (2007), कल्याणी शिक्षा परिषद, नई दिल्ली
15. शर्मा गोपालकृष्ण 'फिरोजपूरी', मोम के रिश्ते (कहानी संग्रह), वर्ष (2011), कल्पना प्रकाशन, दिल्ली

□

अनुवाद के विविध आयाम

सम्पादिका
डॉ. मोनिका देवी

अनुवाद के विविध आयाम

संपादिका

डॉ. मोनिका देवी

विद्या प्रकाशन
'सी', 449 शुजैनी,
कानपुर - 208 022

अनुक्रमणिका

1.	हिन्दी भाषा और अनुवाद	-डॉ. डिम्पल	7-14
2.	अनुवाद का योगदान : मीडिया के डबिंग क्षेत्र में	-डॉ. वी पार्वती	15-17
3.	अनुवाद मूल्यांकन का स्वरूप और संकल्पनाएँ	- डॉ. अस्मा बानु	18-20
4.	तेलुगु साहित्य में नाटक : उद्‌भव एवं विकास	- डॉ. आनंद एस	21-26
5.	न्यायालयीन अनुवाद	- डॉ. नरेश कुमार सिहाग	27-30
6.	अनुवाद : अभिप्राय एवं स्वरूप	- डॉ. सुशीला	31-35
7.	अनुवाद की उपयोगिता	-डॉ. मन्जु कुमारी बगोतिया	36-38
8.	अनुवाद की परिभाषा और महत्व	- प्रो. कामराज सिंधु	39-43
9.	अनुवादक और अनुवाद का महत्व	- डॉ. अश्वनी शर्मा	44-46
10.	अनुवाद के विविध आयाम	- डॉ. सुकेशिनी दीक्षित	47-52
11.	अनुवाद के विभिन्न आयाम	- संजय कुमार	53-54
12.	अनुवाद : एक सांस्कृतिक सेतु	- एल. कान्तीराज	55-57
13.	सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद : काव्यानुवाद के संदर्भ में	- शेख. अफ्रोज	58-62
14.	अनुवाद विभिन्न सोपान, समस्याएँ और समाधान	- तेजस पूनिया	63-73

8.

अनुवाद की परिभाषा और महत्व

–डॉ. कामराज सिन्धु

अनुवाद असाधारण रूप से कठिन और चुनौती भरा कार्य है। यह एक जटिल कृत्रिम आवश्यकता-जनित और एक दृष्टि से सार्वजनिक प्रक्रिया है जिसमें असाधारण और विशिष्ट कोटि की प्रतिभा की आवश्यकता होती है। यह इसकी अपनी प्रकृति है, इसे एक विडम्बना ही कहा जायेगा कि अनुवाद को भी सम्मान का स्थान नहीं मिलता। इसे एक गौण तथा अमौलिक, तथा यंत्रवत् कार्य मानकर इसे मौलिक लेखन की तुलना में हीन कोटि का कार्य माना गया। आज का माहौल भी पहले जैसा ही दिखाई देता है, मौलिक लेखन न होने के कारण अनुवाद को सम्मान का स्थान तो न मिला परन्तु इस वास्तविकता को नजर-अंदाज कर दिया गया कि अनुवाद इसलिए कठिन है कि वह मौलिक लेखन नहीं- पहले कही गई बात को ही दोबारा कहना होता है जिसमें अनेक योजनाओं और बन्धनों का पालन करना जरूरी होता है। इस प्रकार अमौलिक होने के कारण अनुवाद का महत्व तो हो गया परन्तु इस कारण इसके लिए अपेक्षित बन्धनों को महत्वपूर्ण नहीं समझा गया।

किसी भाषा में कही या लिखी गयी बात का किसी दूसरी भाषा में सार्थक परिवर्तन **अनुवाद** (Translation) कहलाता है। अनुवाद का कार्य बहुत पुराने समय से होता आया है। संस्कृत में 'अनुवाद' शब्द का उपयोग शिष्य द्वारा गुरु की बात के दुहराए जाने, पुनः कथन, समर्थन के लिए प्रयुक्त कथन, आवृत्ति जैसे कई संदर्भों में किया गया है। संस्कृत के 'वद्' धातु से 'अनुवाद' शब्द का निर्माण हुआ है। 'वद्' का अर्थ है बोलना। 'वद्' धातु में 'अ' प्रत्यय जोड़ देने पर भाववाचक संज्ञा में इसका परिवर्तित रूप है 'वाद' जिसका अर्थ है- 'कहने की क्रिया' या 'कही हुई बात'। 'वाद' में 'अनु' उपसर्ग जोड़कर 'अनुवाद' शब्द बना है, जिसका अर्थ है, प्राप्त कथन को पुनः कहना। इसका प्रयोग पहली बार मोनियर विलियम्स ने अंग्रेजी शब्द टांसलेशन (translation) के पर्याय के रूप में किया। इसके बाद ही 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग एक भाषा में किसी के द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री की दूसरी भाषा में पुनः प्रस्तुति के संदर्भ में किया गया।

वास्तव में अनुवाद भाषा के इन्द्रधनुषी रूप की पहचान का समर्थतम मार्ग है। अनुवाद की अनिवार्यता को किसी भाषा की समृद्धि का शोर मचा कर टाला नहीं जा सकता और न अनुवाद की बहुकोणीय उपयोगिता से इन्कार किया जा सकता है। ज्त्। छैस्। ज्व्छ के पर्यायस्वरूप 'अनुवाद' शब्द का स्वीकृत अर्थ है, एक भाषा की विचार सामग्री को दूसरी भाषा में पहुँचना। अनुवाद के लिए हिन्दी में 'उल्था' का प्रचलन भी है। अंग्रेजी में ट्रांसलेशन के साथ ही ट्रांसक्रिप्शन का प्रचलन भी है, जिसे हिन्दी में 'लिप्यन्तरण' कहा जाता है। अनुवाद और लिप्यंचरण का अन्तर इस उदाहरण से स्पष्ट है-

उसके सपने सच हुए।

His Dreams Became True-Translation

Uskey Sapne Sach Huey - Transcription

इससे स्पष्ट है कि 'अनुवाद' में हिन्दी वाक्य को अंग्रेजी में प्रस्तुत किया गया है जबकि लिप्यंतरण में नगारी लिपि में लिखी गयी बात को मात्र रोमन लिपि में रख दिया गया है। किसी भाषा में अभिव्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में यथावत् प्रस्तुत करना अनुवाद है। इस विशेष अर्थ में ही 'अनुवाद' शब्द का अभिप्राय सुनिश्चित है। जिस भाषा से अनुवाद किया जाता है, वह मूलभाषा या स्रोत भाषा है। उससे जिस नई भाषा में अनुवाद करना है, वह 'प्रस्तुत भाषा' या 'लक्ष्य भाषा' है। इस तरह, स्रोत भाषा में प्रस्तुत भाव या विचार को बिना किसी परिवर्तन के लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत करना ही अनुवाद है। अनुवाद दशा में पहला सार्थक प्रयास एच.एच. विल्सन ने 1855 में 'ग्लोरी ऑफ़ ज्यूडिशियल एंड रेवेन्यू टर्म्स' के द्वारा किया। सन् 1961 में राजभाषा विधायी आयोग की स्थापना हुई। इसका काम अखिल भारतीय मानक विधि शब्दावली तैयार करना था। 1970 में विधि शब्दावली का प्रकाशन हुआ। इसका परिवर्तन होता आ रहा है। इसका नवीन संस्करण 1984 में निकला। इस आयोग ने कानून सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों का अनुवाद कई न्यायालयों में न्यायाधीश हिन्दी में भी निर्णय देने लगे हैं। अनुवाद सम्बन्धी सिद्धान्तों पर स्वतन्त्र ग्रन्थों का लेखन वस्तुतः बीसवीं शताब्दी में प्रारम्भ हुआ। इसी शताब्दी के दौरान साहित्यिक और भाषा वैज्ञानिक पत्रिकाओं में अनुवाद पर लेखों का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इन्हीं भाषा वैज्ञानिक एवं साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में अनुवाद की कई परिभाषाओं को जन्म दिया। कई परिभाषाओं पर सवाल भी उठाए गए तो कुछ परिभाषाओं को मान्यताएँ भी मिलीं लेकिन आज भी अनुवाद की कोई एक परिभाषा नहीं मिलती है। परिभाषाओं पर विचार किया ज़ाए तो अनुवाद की परिभाषा भाषा वैज्ञानिकों ने भी दी है और साहित्यकारों (कवियों) ने भी दी है, - भाषा में व्यक्त सन्देश के लिए लक्ष्य-भाषा में निकटतम सहज समतुल्य सन्देश को प्रस्तुत करना। यह समतुल्यता पहले तो अर्थ के स्तर पर होती है फिर शैली के स्तर पर।

बीसवीं सदी को अनुवाद का युग कहा गया है। अनुवाद सबसे प्राचीन व्यवसायों में से एक कहलाता है तथा उसके जो भी महत्व बीसवीं सदी में प्राप्त हो रहे हैं वह सबसे पहले उसे नहीं मिला। लोकतंत्र में सब लोगों का प्रशासन में सामान रूप से भाग लेने के अधिकार तभी सार्थक होता है जब उसके साथ उसकी भाषा के माध्यम से सम्पर्क किया जा सके। इससे बहुभाषिकता का माहौल पैदा हो जाता है। इसे अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के बीच राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक तथा साहित्य और सांस्कृतिक स्तर पर बढ़ते हुए आदान-प्रदान के कारण अनुवाद कार्य की अनिवार्यता और महत्ता की नई चेतना प्रबल रूप में विकसित हुई है। वर्तमान युग में समाज का एक बड़ा भाग ऐसा है जो सामाजिक संदर्भ की अनौपचारिकता के समय दो भाषाओं का वैकल्पिक प्रयोग होता है। सामान्य रूप से प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति शहरी परिवेश का अर्धशिक्षित व्यक्ति, दो भिन्न भाषा-भाषी राज्यों की सीमा प्रदेश में रहने वाली जनता इसमें काफी अन्तर दिखाई देता है। हम मन ही मन पहली भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद कर अपनी बात कह देते हैं। यह माना गया कि अन्य भाषा के परिवेश में अन्य भाषा कितने समय अनुवाद का प्रत्यक्ष रूप से अस्तित्व रहता है और महत्व भी। इस दृष्टि से अनुवाद एक सामाजिक भाषा व्यवहार है। आधुनिक प्रशासनिक हिन्दी तथा पत्रकारिता हिन्दी इसके अच्छे उदाहरण हैं। इस प्रक्रिया को भाषा नियोजन और भाषा विकास कहते हैं, वह अपने स्तर पर सामाजिक-आर्थिक विकास का अंग है। इस प्रकार अनुवाद के माध्यम से विकासशील भाषा में महत्वपूर्ण बन गया है हम कह सहते हैं कि इस रूप में अनुवाद राष्ट्रीय विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान करता है। गेटे के शब्दों में अनुवाद असम्भव होते हुए भी (सामाजिक दृष्टि से) आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है।

जॉन कनिंगटन - 'लेखक ने जो कुछ कहा है, अनुवादक को उसके अनुवाद का प्रयत्न तो करना ही है, जिस ढंग से कहा, उसके निर्वाह का भी प्रयत्न करना चाहिए।'

कैटफोड - 'एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री से प्रतिस्थापना ही अनुवाद है।'

1. मूल-भाषा (भाषा)
2. मूल भाषा का अर्थ (संदेश)
3. मूल भाषा की संरचना (प्रकृति)
4. मूल भाषा की शैली (विन्यास)
    1. लक्ष्य भाषा में उसका अर्थ (संदेश)
    2. लक्ष्य भाषा की संरचना (प्रकृति)

3. लक्ष्य भाषा की शैली (विन्यास)

4. लक्ष्य-भाषा (भाषा)

सैमुएल जॉनसन - 'मूल भाषा की पाठ्य सामग्री के भावों की रक्षा करते हुए उसे दूसरी भाषा में बदल देना अनुवाद है।'

फॉरेस्टन - 'एक भाषा की पाठ्य सामग्री के तत्त्वों को दूसरी भाषा में स्थानान्तरित कर देना अनुवाद कहलाता है। यह ध्यातव्य है कि हम तत्त्व या कथ्य को संरचना (रूप) से हमेशा अलग नहीं कर सकते हैं।'

हैलिडे - 'अनुवाद एक सम्बन्ध है जो दो या दो से अधिक पाठों के बीच होता है, ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं।'

न्यूमार्क - 'अनुवाद एक शिल्प है, जिसमें एक भाषा में व्यक्त सन्देश के स्थान पर दूसरी भाषा के उसी सन्देश को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।'

पट्टनायक - 'अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सार्थक अनुभव (अर्थपूर्ण सन्देश या सन्देश का अर्थ) को एक भाषा-समुदाय से दूसरी भाषा-समुदाय में सम्प्रेषित किया जाता है।'

विनोद गोदरे - 'अनुवाद, स्रोत-भाषा में अभिव्यक्त विचार अथवा व्यक्त अथवा रचना अथवा सूचना साहित्य को यथासम्भव मूल भावना के समानान्तर बोध एवं सम्प्रेषण के धरातल पर लक्ष्य-भाषा में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है।'

रीतारानी पालीवाल - 'स्रोत-भाषा में व्यक्त प्रतीक व्यवस्था को लक्ष्य-भाषा की सहज प्रतीक व्यवस्था में रूपान्तरित करने का कार्य अनुवाद है।'

दंगल झाल्टे - 'स्रोत-भाषा के मूल पाठ के अर्थ को लक्ष्य-भाषा के परिनिष्ठित पाठ के रूप में रूपान्तरण करना अनुवाद है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अनुवाद की परिकल्पना में स्रोत-भाषा की सामग्री लक्ष्य-भाषा में उसी रूप में, सम्पूर्णता में प्रकट होती है। सामग्री के साथ प्रस्तुति के ढंग में भी समानता हो। मूल-भाषा से लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरित करने में स्वाभाविकता का निर्वाह अनिवार्यतः हो। और लक्ष्य-भाषा में व्यक्त विचारों में ऐसी सहजता हो कि वह मूल-भाषा पर आधारित न होकर स्वयं मूल-भाषा होने का एहसास पैदा करे। हम यह भी लक्ष्य करते हैं कि लगभग सभी परिभाषाओं में अनुवाद-प्रक्रिया को शामिल किया गया है। इन सभी परिभाषाओं के आधार पर 'अनुवाद' को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है : 'अनुवाद, मूल-भाषा या स्रोत-भाषा में निहित अर्थ (या सन्देश) व शैली को यथासम्भव सहज समतुल्य रूप में लक्ष्य-भाषा की प्रकृति व शैली के अनुसार परिवर्तित करने की सोद्देश्य पूर्ण प्रक्रिया है।

दूसरी बात यह है कि अनुवाद मूल पाठ के बोधन तथा लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्ति इन दो ध्रुवों के बीच निरन्तर होते रहने वाली प्रक्रिया है जो सीधी और प्रत्यक्ष न होकर घुमावदार तथा परोक्ष है। इस मध्यवर्ती संरचना का अधिष्ठान अनुवादक का मस्तिष्क होता है। सांस्कृतिक दृष्टि से आपेक्ष्य कृत निकट भाषाओं में इस वैचारिक पृष्ठभूमि की सत्ता की चेतना अधिक स्पष्ट होती है। इस बात को इस ढंग से भी कहा जा सकता है कि अनुवादक मूलभाषा पाठ की वैचारिक संरचना का अनुवाद करता है परन्तु अनुवाद की प्रक्रिया की यह आन्तरिक विशेषता है कि जो संरचना लक्ष्य भाषा में अनुमोदित होती है। अन्त में मूल भाषा पाठ का सन्देश जो अनूदित हो जाता है उसकी यह व्याख्या है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. बालेन्द्र शेखर तिवारी, अनुवाद विज्ञानं, दरियागंदज, नई दिल्ली
2. डॉ. माणिक मृगेश, भूमंडलीकरण निजीकरण व हिन्दी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली 3. नगेन्द्र - अनुवाद विज्ञानं, दिल्ली विश्वविद्यालय
4. वासुदेव नंदन प्रसाद, हिन्दी अनुवाद : सिद्धान्त और प्रयोग, दिल्ली
5. कैलाश चंद्र भाटिया, अनुवाद कला और सिद्धान्त, दिल्ली
6. कैलाश चंद्र भाटिया, भारतीय भाषाएँ और हिन्दी अनुवाद : समस्या-समाधान, दिल्ली
7. डॉ. रीता रानी पालीवाल, अनुवाद की सामाजिक भूमिकाएँ। आशफ अली रोज नई दिल्ली
8. google (Internet)
9. डॉ. सुरेश कुमार, अनुवाद सिद्धान्त की रूपरेखा, नई दिल्ली

वैश्विक हिन्दी साहित्य शोध संस्थान

प्रधान सम्पादक - शोध दर्पण मासिक रिसर्च पत्रिका

Kurukshetra University Kurukshetra

Email- kamrajsindhu.kuk@gmail.com

Mob. No. 91+8708592400, 91+9416090378

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

संत रविदास की वाणी का सामाजिक चिंतन

डॉ कामराज सिन्धु

जीवनवृत -

मन चंगा तो कठौती में गंगा का संदेश देने वाले गुरु रविदास जी 15 वीं-16 वीं शताब्दी में एक महान संत, दार्शनिक, कवि, समाज सुधारक के रूप मे हुए। । गुरु रविदास जी को निर्गुण सम्प्रदाय के रूप मे जानते थे, जिन्होंने उत्तरी भारत में भक्ति आन्दोलन का नेतृत्व किया था । रविदास जी बहुत एक कवि के रूप मे भी जाना जाता था , इन्होने अपनी रचनाओं के माध्यम से, अपने अनुयायीयों, समाज एवं देश के कई लोगों को धार्मिक एवं सामाजिक सन्देश दिया । रविदास जी की रचनाओं में उनके अंदर भगवान् के प्रति प्रेम की झलक साफ़ दिखाई देती थी, वे अपनी रचनाओं के द्वारा दूसरों को भी परमेश्वर से प्रेम के बारे में बताते थे , और उनसे जुड़ने के लिए कहते थे। आम लोग उन्हें मसीहा मानते थे , क्यूंकि उन्होंने सामाजिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बड़े - बड़े कार्य किये थे। उनके अनुयाइ इन्हें भगवान की तरह पूजते थे, और आज भी उनका वही सम्मान है। समाज में धर्म के नाम पर तथाकथित क्रियाकलाप मनुष्य और मनुष्यता के दुश्मन बनकर हमारे सामने आए दिन आते हैं।रविदास जी इन आडंबरों से मुक्त हो कर मन की शुद्धता और श्रम को महत्त्व देने की शिक्षा दी।यही कारण है कि जाति,धर्म और संप्रदाय से परे होकर रविदास जी का चिंतन पूरे विश्व को प्रकाशित करता

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

है।उनकी बातें कम शब्दों में विस्तृत अर्थ देती हैं ,जिससे उन्हें सामाजिक क्रांति का अग्रदूत कहा जाता है।आज के इस आधुनिक समय में संपूर्ण मानव जाति को विखंडित होने से बचाने के लिए रविदास जी के चिंतन का अनुसरण करना आवश्यक है। लगभग सवा छः सौ वर्ष पूर्व 1398 की माघ पूर्णिमा को काशी के मड़ुआडीह ग्राम में संतोख दास और कर्मा देवी के परिवार में जन्में संत रविदास यानि संत रैदास को निस्संदेह हम भारत में धर्मांतरण के विरोध में स्वर मुखर करनें वाली और स्वधर्म में घर वापसी करानें वाली प्रथम पीढ़ी के प्रतिनिधि संत के रूप मए जानते है। संत रैदास संत कबीर के गुरुभाई और स्वामी रामानंद जी के शिष्य थे यह बात आज भी साबित नही हो पाई। उनकें कालजयी लेखन को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि उनकें रचित 40 दोहे गुरु ग्रन्थ साहब जैसे महान ग्रन्थ में सम्मिलित किये गए हैं । मानव की पवित्रता और सज्जनता मान भाव के द्वारा मनुष्य का मूल्यांकन होता है। इससे मानव गुण न केवल अपना अपितु समस्त मानव जाति का मार्गदर्शन करता है और मनुष्य जीवन लक्ष्य की पूर्ति से सहायक होते हैं। वेद - शास्त्रों में सेवा, दान, परहित कामना, सत्य आचरण, संतोष, अपरिग्रह आदि को आंतरिक शुचिता के लिए महत्वपूर्ण बताया है। इसलिए मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईष्या वैर से रहित होकर मानवीय भावना से प्रेरित होकर हमें मानवता की सेवा करनी चाहिए।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

ऐसा चाहूं राज मैं, जहां मिले सबन को अन्न,

छोट-बड़ो सब सम बसे, रविदास रहे प्रसन्न'

संत रविदास एक ऐसे समाज की कल्पना करना चाहते थे जिसमे सबको समान अधिकार मिले और जीवन यापन के सभी साधन । भारतीय समाज में आजकल धर्मांतरण और हिन्दू धर्म में घर वापसी एक बड़ा विषय चर्चित और उल्लेखनीय है। यह विषय राजनैतिक कारणों से चर्चित भले ही अब हो रहा हो कि किन्तु सामाजिक स्तर पर धर्मांतरण हिन्दुस्थान में सदियों से एक चिंतनीय विषय रहा है । इस देश में धर्मांतरण की चर्चा और चिंता पिछले आठ सौ वर्षों पूर्व प्रारम्भ हो गई थी , समय-काल-परिस्थिति के अनुसार यह चिंता कभी मुखर होती रही तो अधिकांशतः आक्रान्ताओं और आततताइयों के अत्याचार से दबे-कुचले स्वरुप में अन्दर ही अन्दर और पीढ़ी दर पीढ़ी प्रवाहित होती रही। बहरवी सदी में जब मुस्लिम आक्रान्ता भारत की ओर बढ़े तब वे धन लूटनें और धर्म के प्रचार के स्पष्ट और घोषित एजेंडे के साथ ही आये थे । इन बाहरी आक्रान्ताओं और शासकों को भारत की जनता को बहला फुसलाकर या जबरदस्ती बलात धर्मांतरण करानें में किसी प्रकार का कोई कसर नहीं छोड़ी , ऐसा करके वे अपनें को गौरान्वित ही महसूस करते थे। उस दौर में स्वाभावतः ही हिंदुस्थानी परिवेश में धर्मांतरण को लेकर भय, चिंता और इससे छुटकारे पाने की प्रवृत्ति उपजने लगी थी। कुछ समय के साथ साथ धर्मान्तारण कारी शक्तियों से छुटकारा पानें की यह प्रवृत्ति समय-काल-परिस्थिति के अनुसार कभी उभरती और कभी दबती रही किन्तु सदैव जीवित अवश्य रही।

संत रैदास ने जब समाज में तत्कालीन आततायी विदेशी मुस्लिम शासक सिकंदर लोदी का आतंक देखा तब वे दुखी हो बैठे। उस समय लोदी ने हिंदुस्थानी जनता को सताना-कुचलना और

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

डराकर धर्म परिवर्तन कराना प्रारम्भ किया हुआ था। हिन्दुओं पर विभिन्न प्रकार के नाजायज कर जैसे तीर्थ -यात्रा पर जजिया कर, शव -दाह करनें पर कर, हिन्दू रीति से विवाह करनें पर जजिया कर जैसे आततायी आदेशों से देश का हिन्दू समाज त्राहि-त्राहि कर उठा था । भारतीय-हिन्दू परंपराओं और आस्थाओं के पालन करनें वालों से कर वसूल करनें और मुस्लिम धर्म माननें वालों को छूट, प्राथमिकता वरीयता देनें के पीछे एक मात्र भाव यही था कि हिन्दू धर्मावलम्बी तंग आकर इस्लाम स्वीकार कर लें। उस समय में स्वामी रामानंद ने अपनें भक्ति भाव के माध्यम से देश में भक्ति का भाव जागृत किया और आततायी मुसलमान शासकों के विरुद्ध एक आन्दोलन को प्रारम्भ किया ।स्वामी रामानन्द ने तत्कालीन परिस्थितियों को समझकर कर विभिन्न जातियों के प्रतिनिधि संतों को जोड़कर द्वादश भगवत शिष्य मण्डली स्थापित की तथा विभिन्न समाजों का प्रतिनिधित्व करनें वाली इस द्वादश मंडली के सूत्रधार और प्रमुख , संत रविदास जी को बनाया।संत रैदास ने हिन्दू संस्कारों के पालन पर मुस्लिम शासकों द्वारा लिए जानें वाले जजिया कर का अपनी मंडली के मध्यम से विरोध किया और इस हेतु जागरण अभियान चलाया गया।इस मंडली ने सम्पूर्ण भारत में भ्रमण कर देशज भाव और स्वधर्म भाव के रक्षण और उसके जागरण का दूभर कार्य करना प्रारम्भ किया । संत रैदास के नेतृत्व में उस समय समाज में ऐसा जागरण हुआ कि उन्होंने धर्मांतरण को न केवल रोक दिया बल्कि उस कठिनतम और चरम संघर्ष के दौर में मुस्लिम शासकों को खुली चुनौती देते हुए देश के अनेकों क्षेत्रों में धर्मान्तरित हिन्दुओं की घरवापसी का कार्यक्रम भी जोरशोर से चलाया। संत रविदास न केवल देश भर की पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार्य संत हो गए अपितु अगड़ी जातियों के शासकों और राजाओं ने भी उन्हें राजनैतिक कारणों से अपनें अपनें दरबार में

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सम्मानपूर्ण स्थान देना प्रारम्भ कर दिया । इस प्रकार संत रविदास को मिलनें वाले सम्मान के कारण देश की पिछड़ी और अगड़ी जातियों एतिहासिक समरसता का वातावरण निर्मित हो चला था। संत रैदास भारतीय सामाजिक एकता के प्रतिनिधि संत के रूप में स्थापित हो गए थे क्योंकि मुस्लिम शासकों को चुनौती देनें का जो दुष्कर कार्य ये शासक नहीं कर पाए थे वह समाज शक्ति को जागृत करनें के बल पर एक संत ने कर दिया था। पिछड़ी जातियों में आर्थिक व सामाजिक पिछड़ेपन के बाद भी स्वधर्म सम्मान का भाव जागृत करनें में रैदास सफल रहे और इसी का परिणाम है कि आज भी इन जातियों में मुस्लिम मतांतरण का बहुत कम प्रतिशत देखनें को मिलता है । निर्धन और अशिक्षित समाज में धर्मांतरण रोकनें और घर वापसी का जो अद्भुत, दूभर और दुष्कर कार्य उस काल में हुआ वह इस दिशा में प्रतिनिधि रूप में संत रैदास का ही सूत्रपात था। यदि उस समय कहीं संत रैदास आततायी लोदी के दिए लालच में फंस जाते या उससे भयभीत हो जाते तो इस देश के हिंदुस्थानी समाज की बड़ी हानि होती।

उन्होंने अपनी रैदास रामायण में लिखा –

"वेद धर्म सबसे बड़ा अनुपम सच्चा ज्ञान

फिर क्यों छोड़ इसे पढ लूं झूठ कुरआन

वेद धर्म छोडूं नहीं कोसिस करो हजार

तिल-तिल काटो चाहि,गला काटो कटार"

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

'कह रैदास तेरी भगति दूरि है , भाग बड़े सो पावै तजि अभिमान मेटि आपा पर , पिपिलक हवै चुनि खावै।'

इसका अर्थ है कि ईश्वर भक्ति अहोभाग्य होती है। अभिमान शून्य रहकर काम करने वाला व्यक्ति जीवन में सफल रहता है जैसे कि विशाल हाथी शक्कर के कणों को चुनने में असमर्थ रहता है , जबकि लघु शरीर की 'पिपीलिका' यानि चींटी इन कणों का सहजता से भक्षण कर लेती है। इस प्रकार अभिमान तथा बड़प्पन का भाव त्याग कर विनम्रतापूर्वक आचरण करने वाला मनुष्य ही ईश्वर भक्त हो सकता है। अपनें सहज-सुलभ उदाहरणों वाले और साधारण भाषा में दिए जानें वाले प्रवचनों और प्रबोधनों के कारण संत रैदास भारतीय समाज में अत्यंत आदरणीय और पूज्यनीय हो गए थे। वे भारतीय वर्ण व्यवस्था को भी समाज और समय अनुरूप ढालनें में सफल हो गए वे अपनें जीवन के अन्तकाल तक धर्मांतरण के विरोध में समाज को जागृत करते रहे और वैदिक धर्म में घर वापसी का कार्य भी ,उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म और राष्ट्र रक्षार्थ जिया ।संत रैदास ने भारतीय समाज को **"मन चंगा तो कठौती में गंगा "** जैसी कालजयी लोकोक्ति दी जिसके बड़े ही सकारात्मक अर्थ वर्तमान परिवेश में भी निकलतें हैं । स्वामी विवेकानंद ने एक धर्मांतरण से एक राष्ट्र शत्रु के जन्म का जो विचार वर्तमान काल में प्रकट किया उसे संत रैदास नें छः सौ वर्ष पूर्व समझ दिया था और राष्ट्र को समझानें बतानें हेतु देश के हर हिस्सें में जाकर जागरण भी किया था। नमन इस अद्भुत संत को , राष्ट्रभक्त को और अनुपम भविष्यदृष्टा को. संत-साहित्य भारतीय चिंतन की विभिन्न विचार-सरणियों का अपूर्व समुच्चय है। स्वानुभूति और सहजावस्था ही वह भारत के लिए अज्ञान , अशिक्षा और अनैतिकता का

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

अंधकारमय युग था और ये कवि अपने युग की जनता के निम्न स्तर से संबंधित थे , फिर भी इन्होंने ज्ञान की जो ज्योति प्रज्ज्वलित की, वह अद्‌भूत एवं अपूर्व है।

आज भले ही हमने आधुनिकता का मुखौटा ओढ़ रखा हो किन्तु हमारी अवस्था मध्ययुग से भी बदतर है। आज का औसत मनुष्य शंका , उलझन, विषमता-बोध, असंगति तथा अनिश्चय की मानसिकता से ग्रसित है। पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण , वैज्ञानिकता, अतिबौद्धिकता, नगरीकरण, बढ़ती हुई आबादी , फ़िल्मों के दुष्परिणाम आदि के कारण मानवीय जीवनमूल्य टूटने लगे हैं और उनमें परिवर्तन होने लगा है। आदमी स्वार्थी हो गया है। वैयक्तिकता , निराशा, कुंठा, अनास्था, घुटन, विद्रोही भावना उसमें छा गई है। नज़दीक के रिश्तों को भी वह भूल गया है। बौद्धिकता का महत्त्व इतना बढ़ रहा है कि मानवीय भावनाओं को वह निगल गई है। निष्ठा , शील, सत्य, उदारता, नैतिकता, प्रामाणिकता, पवित्रता, सदाचार आज मनुष्य में कम दिखाई देते हैं। सौंदर्यात्मक , नैतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक, मानवीय जीवन-मूल्यों का विघटन होता जा रहा है।

मनुष्य अर्थ के लिए सभी मूल्यों को कुचलता जा रहा है। इस स्थिति को देखकर कमलेश्वर लिखते हैं- "कितना विचित्र और विकराल है यह दृश्य जो कुछ ही वर्षों में इस देश में उपस्थित हो गया है कि ज़हर खाकर आदमी जीवित रह सकता है पर एक कटोरी दाल पीकर मर सकता है, इमारतें बनती जाएँ और आदमी लुटता जाए, बैंक खुलते जाएँ और आदमी ग़रीब होता जाए, सरकारें बनती जाएँ , आदमी पथराता जाए और खून के आँसू रोता जाए।" अतः इस भीषण

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

वर्तमान परिवेश में संतों की पीयूषवाणी जनसाधारण को सबल प्रदान कर सकती है। आज के त्रस्त, उपेक्षित, उत्पीड़ित मानव को परिज्ञान प्रदान कर , उसका पथप्रदर्शन कर , समाज को सशक्त, निर्दोष एवं कल्याणकारी मार्ग पर अग्रसर करना केवल संत साहित्य के सामाजिक आदर्शों के वरण से ही संभव है।

संत-साहित्य उतना ही प्राचीन है जितनी प्राचीन मनुष्य के हृदय की उपासना-प्रवृत्ति। संत कवियों ने अपने विचारों में निहित सत्य को शाश्वत एवं विश्वजनीत मानते हुए , उन्हें दूसरों के हितार्थ प्रकट करना चाहा। इन कवियों का काव्य , शास्त्रों का विवेचन अथवा पांडित्य प्रदर्शन नहीं है, अपितु यह काव्य उनके अनुभवों की उपज है इसलिए यह सीधे जन-मानस में प्रवेश कर जाता है। मसि कागद छूयो नहीं , कलम गह्यो नहीं हाथ-जैसी स्वीकारोक्ति द्वारा कबीर स्पष्ट करते हैं कि उन्होंने जो कुछ भी प्राप्त किया अपनी साधना और अनुभवों से प्राप्त किया। वे शास्त्रों अथवा पोथियों की बात नहीं करते। अनुभूति सत्य होने के कारण ही कबीर की उक्तियाँ शाश्वत सत्य की तरह आज भी प्रासंगिक हैं।

आज मानव-मानव में धर्म , अर्थ, स्तर आदि के आधार पर भेद चरम पर है। मनुष्य-मनुष्य का दुश्मन बन बैठा। ऐसे में इस भेद को मिटाकर ही एकता के निर्माण द्वारा स्वस्थ समाज की नींव डाली जा सकती है। संत कवियों के अनुसार यह सारा जगत् एक ही तत्व से उत्पन्न है। इसलिए सभी प्रकार की भेद-दृष्टि मिथ्या है। मानव-मानव में भेद तो परम अज्ञान का द्योतक है। इसी तत्व दृष्टि से प्रेरित संत कवियों ने जाति-पाँति , छूआ-छूत, ऊँच-नीच और ब्राह्मण-शुद्र के भेद का विरोध किया। इसमें संदेह नहीं कि इन भेदों को दूर करने पर एक सुन्दर समाज की रचना हो

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सकती है। ऐसा समाज जिसमें मनुष्य केवल मनुष्य रूप में स्थापित हो सके- जो आज तक संभव नहीं हुआ। कबीर कहते हैं कि एक ही ज्योति सब में व्याप्त है, दूसरा कोई तत्व है ही नहीं-

एकहि ज्योति सकल घट व्यापक दूजा तत्व न होई।

कहै कबीर सुनौ रे संतो भटकि मरै जनि कोई॥

अतः जाति-धर्म के आधार पर भेदभाव करना व्यर्थ है। संत कवि सार्वभौम मानव-धर्म के प्रतिष्ठापक थे। रैदास का भी मानना था कि जब तक समाज में जाति-धर्म का भेद रहेगा , तब तक मानवता की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती-

जात-पात के फेर महि, उरझि रहुइ सब लोग।

मानुषता को खात है, 'रैदास' जात का रोग॥

मानवता की प्रतिष्ठा के बगैर समाज में किसी भी प्रकार के सुधार की बात करना छलावा मात्र है। मानवता के लोप के कारण ही आज का समाज सांप्रदायिकता की आग में झुलस रहा है। चारों ओर दहशत और आतंकवाद का बोल-बाला है। धार्मिक उन्माद के चूल्हे पर नेतागण अपने स्वार्थ की रोटियाँ सेंक रहे हैं। हिन्दू-मुस्लिम में अनाम दूरियाँ आ गई है। इन विपरीत परिस्थितियों में संप्रदायवाद के विरोध के माध्यम से मानवीय एकता का मार्ग संत-साहित्य से ही निकाला जा सकता है। संत कवियों ने राम-रहीम के पार्थक्य को समाप्त किया। संत कवियों ने लोकधर्म की स्थापना की और जन-सामान्य को रूढ़ तथा जर्जर अंधविश्वासों से अलग कर मानवीयता के नए सूत्र में आबद्ध किया। साथ ही बाह्याडंबर , मिथ्याचार एवं कर्मकांड के भी विरोधी थे। वर्तमान परिवेश में उच्च विद्याविभूषित होने के बावजूद लोगों में बाह्याडंबर, मिथ्याचार आदि का बोलबाला है। लोग अंधविश्वास में अपना विवेक खो चुके हैं।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

वर्तमान पर दृष्टिक्षेप करने से यह प्रतीत होता है कि मध्यकालीन परिस्थिति से वर्तमान अधिक भिन्न नहीं है। संतकवियों का एकमात्र उद्देश्य था जनता को जागरूक कर उनका पथ प्रदर्शन करना। कबीर निराकार-निर्गुण की भक्ति का प्रतिपादन सोद्देश्य करते हैं , जिसके मूल में सामाजिक-सांस्कृतिक कारक हैं और कर्मकांड , तीर्थाटन आदि का विरोध भी इसी आशय से है। कबीर के अनुसार जो लोग मूर्ति को कर्ता मानकर पूजते हैं वे मृत्यु की काली धारा में डूब जाते हैं-

पाहन केरा पूतरा पूजै करतार।
इहि भरोसे जे रहे बूडे काली धार॥

तप-जप, रोज़ा-नमाज यह सब मन को परिष्कृत करने के साधन है। यदि मन साफ़ नहीं है तो 'वजू' करने से क्या लाभ जप-मंजन से क्या होगा? मस्जिद में जाकर सिर नवाने से क्या बनेगा। नमाज गुज़ारना या हज और काबे जाना तभी सार्थक है जब दिल में कपट नहीं है-

तीर्थाटन की व्यर्थता को प्रतिपादित करते हुए रैदास कहते हैं-

तीरथ बरत न करौ अंदेशा। तुम्हारे चरन कमल भरोसा।
जहं तहं जाओ तुम्हारी पूजा। तुमसा देव और नहीं दूजा॥

आज रिश्तों में अपनत्व का भाव नहीं है। रिश्तों में दरारें पड़ रही हैं और परिवार विघटित हो रहे हैं। इसका प्रधान कारण है पारस्परिक प्रेम का अभाव। आज 'प्रेम' की जगह 'स्वार्थ' ने ले ली है। परिणामस्वरूप मनुष्य का दायरा 'स्व' तक सिमटकर रह गया है। संत कवि प्रेम के महत्त्व को स्वीकार करते हैं।

इसी प्रेमभावना के कारण इन कवियों ने एकता स्थापित की। इन कवियों का प्रेम आध्यात्मिक होकर भी लोकपरक तथा वास्तविक संदर्भों में मानवीय है। साथ ही कबीर ने मनुष्य की धन-संचय की स्वार्थी प्रवृत्ति पर भी चोट की है। आज समाज में प्रतिष्ठा और सम्मान की कसौटी मानव मूल्य न होकर केवल धन होता जा रहा है। हमारे सभी सामाजिक संबंधों और पारिवारिक रिश्तों पर अर्थतंत्र हावी हो गया है। प्रत्येक मनुष्य धन के पीछे बेलगाम घोड़े की तरह दौड़ रहा है। फलतः किसी के भी मन में 'समाधान' नदारद है। अतः कबीर ने मध्यकाल में ही मनुष्य की इस लोभी प्रवृत्ति पर चोट की है-

सांई इतना दीजिए जामै कुटुंब समाए।
मैं भी भूखा ना रहूँ साधु ना भूखा जाए॥

रैदास ने भी धनसंचय को दुख की खान कहा है-

सच्चा सुख सत्त धरम मंहि, धन संचय सुख नाहि।
धन संचय दुख खान है, 'रैदास' समुझि मन माहिं॥

मनुष्य को उसका चरित्र ही ऊँचा उठाता है। अतः चारित्रिक श्रेष्ठता को बनाए रखना अनिवार्य है। किन्तु वर्तमान परिवेश की विडंबना यह है कि मनुष्य का चारित्रिक पतन चरम पर पहुँच गया है जिसके कारण समाज विनाश के कगार पर है। संत कवि स्थान-स्थान पर बहुत स्पष्टता से चारित्रिक श्रेष्ठता की बात कहते हैं। वे मनुष्य की वाणी और कर्मों के समन्वय पर बल देते हैं , जिसका नितांत अभाव आज के नेताओं में दिखाई देता है। कबीर कहते हैं कि जो अपनी वाणी के अनुरूप कर्म नहीं करता वह श्वान है और अपने पापों के कारण नर्क भोगता है। अनैतिकता एवं अनाचार के इस युग में मनुष्य दिन-व-दिन आलस्य की ओर उन्मुख हो रहा है। कर्म से पलायन

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

करने के कारण ही वह संत्रस्त जीवन व्यतीत कर रहा है। ऐसे में संत कवियों द्वारा प्रतिपादित कर्म का संदेश उपयुक्त प्रतीत होता है। उनके अनुसार कर्म ही मनुष्य का धर्म है।

समग्रतः संत-साहित्य दुरूहता तथा जटिलता का साहित्य नहीं है , वरन यह मनुष्य की सहजता तथा स्वाभाविक मनः स्थितियों का साहित्य है। इसमें जनसामान्य की आशा-अकांक्षा , सुख-दुख सन्निहित है। जन-जागरण की चेतना लेकर स्फुरित हुआ यह साहित्य आशावादी मूल्यों की स्थापना करता है। सामाजिक जड़ता एवं अराजकता से घिरे वर्तमान जटिल परिवेश में हम संत-साहित्य के सामाजिक आदर्शों को आधुनिक संवेदना के अधिक निकट पाते हैं। संत-साहित्य में मानव की क्षुद्रताओं , सीमाओं, स्वार्थपरता, असत्यप्रियता, संकीर्णता, अर्थलोलुपता, कामुकता आदि पर प्रहार हुआ है। संत कवियों ने जीवनदायिनी शक्तियों की ओर जनसामान्य का ध्यान आकर्षित किया और समाज को सशक्त, निर्दोष एवं कल्याणकारी मार्ग पर अग्रसर करने की चेष्टा की है।

अतः स्पष्ट है कि संतों की शाश्वत वाणी का महत्त्व मध्ययुग में ही नहीं, भारतीय संस्कृति के लिए हर युग में रहेगा। आधुनिक युग के महान विचारकों ने भी संतो के इस महत्त्व को समझा था। संतों के राम-रहीम और केशव-करीम की भाँति महात्मा गाँधी ने भी ईश्वर-अल्लाह को एक ही समझा। उनका प्रिय भजन- ईश्वर-अल्लाह तेरो नाम , सबको सन्मति दे भगवान संतवाणी की परंपरा में ही आता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी संतों के भगवत् प्रेम के आदर्श को सार्वदेशिक और विश्वजनीत कहा है। संत-साहित्य की चिर-प्रासंगिकता का वर्णन करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं- "संत-काव्य साधना में तत्पर एवं सर्वजन की मंगलकामना करने वाले भक्तों के सरल-हृदयों की सहज अनुभूति का चित्रण-मात्र है। यह वह प्रकाश-स्तंभ है जो

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

निराशा, वासना, प्रतिरोध और प्रतिहिंसा के अंधकार में भटकते हुए मानव समाज को शताब्दियों से प्रकाश दे रहा है और भविष्य में भी मार्ग प्रदर्शित करता रहेगा।"

गुरु रैदास जी की सच्चाई , मानवता, भगवान् के प्रति प्रेम , सद्भावना देख , दिन पे दिन उनके अनुयाई बढ़ते जा रहे थे । दूसरी तरफ कुछ ब्राह्मण उनको मारने की योजना बना रहे थे । रविदास जी के कुछ विरोधियों ने एक सभा का आयोजन किया , उन्होंने गाँव से दूर आयोजित की और उसमें गुरु जी को आमंत्रित किया । गुरु जी उन लोगों की उस चाल को पहले ही समझ जाते है। गुरु जी वहाँ जाकर सभा का शुभारंभ करते है. गलती से गुरु जी की जगह उन लोगों का साथी भल्ला नाथ मारा जाता है। गुरु जी थोड़ी देर बाद जब अपने कक्ष में शंख बजाते है, तो सब अचंभित हो जाते है। अपने साथी को मरा देख वे बहुत दुखी होते है , और दुखी मन से गुरु जी के पास जाते है। रविदास जी के अनुयाईयों का मानना है कि रविदास जी 120 या 126 वर्ष बाद अपने आप शरीर को त्याग दिया। लोगों के अनुसार 1540 AD में वाराणसी में उन्होंने अंतिम सांस ली थी।

संदर्भ-

1 फादर कामिल बुल्के , अंग्रेजी हिन्दी शब्दकोश

2. रविदास दर्शन –आचार्य पृथ्वी आजाद ,गुरु रविदास संस्थान चंडीगढ़

3. रैदास-डॉ धर्मपाल मैनी ,साहित्य अकादमी दिल्ली

4. रैदास समग्र - सम्पादक डॉ. युगेश्वर, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन वाराणसी,

5. संत रविदास और कबीरदास की वाणी का अध्ययन –डॉ कमराज सिंधु

6. संत गुरु रविदास - वेणी प्रसाद शर्मा –सूर्य प्रकाश दिल्ली

7. रैदास समग्र, सम्पादक डॉ. युगेश्वर, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन वाराणसी

8. डॉ. नरेश, पंजाबी दुनिया, गुरू रविदास विशेषांक, जून - जुलाई, 1977,

9. डॉ. चन्द्रदेव राय: कबीर ओर रैदास - एक तुलनात्मक अध्ययन

10. रैदास समग्र, संपादक डॉ. युगेश्वर, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन, वाराणसी

11. संत गुरु रविदास की भक्ति साधना - वेणी प्रसाद शर्मा ,विश्व भारती प्रकाशन चंडीगढ़

12. भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक रेखाएं - आचार्य परशुराम चतुर्वेदी

13. रविदास दर्शन, -आचार्य पृथ्वी सिंह, गुरु रविदास संस्थान चंडीगढ़

14. संत रैदास-योगेन्द्र सिंह, लोक भारती प्रकाशन ,इलाहबाद

15. गुरू रविदास वाणी और महत्व: सम्पादक डॉ. मीरा गौतम,

16. संत गुरु रविदास वाणी –डॉ॰ वी ॰पी॰ शर्मा ,सूर्य प्रकाशन दिल्ली

संप्रति –अध्यक्ष हिन्दी विभाग ,दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय

कुरुक्षेत्र विश्वविधालय,कुरुक्षेत्र।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भाषा और संस्कृति में सिनेमा और मीडिया का योगदान

डॉ कामराज सिन्धु

भूमिका -

भाषा किसी व्यक्ति , समाज, संस्कृति या राष्ट्र की पहचान होती है । वास्तव में भाषा एक संस्कृति है , उसके भीतर भावनाएं, विचार ,सम्प्रेषण और सदियों की जीवन पध्दति समाहित होती है । भाषा ही परम्पराओं और संस्कृति से जोड़ कर रखने की एक मात्र कड़ी है। भारत में राम-राम या प्रणाम आदि सम्बोधन व्यक्ति को व्यक्ति से तथा समष्टि से जोड़ने वाली सांस्कृतिक अभिव्यक्तियां हैं वह चाहे व्हा बीएचजीडवल्यूएन को सम्बोधन करना हो । उदाहरण के लिए प्रथम सम्बोधन के समय हम हाथ मिलाकर गुड मार्निंग नहीं करते हैं , बल्कि हाथ को जोड़कर राम या अन्य भगवान का नामोच्चारण करते हैं , यही भारतीय संस्कृति का परिचय होता है । यह नामोच्चारण एक तरफ हमें मर्यादा अथवा सम्बन्धित भगवान की विशेषता के कारण अर्जित युग-युगान्तकारी ख्याति की याद दिलाता है तो दूसरी तरफ राम जैसे शब्दों का उच्चारण हमारी अन्त:स्रावी (एंडोक्राइन) ग्रंथियों योग की भाषा में चक्रों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है । हाथ मिलाकर हम रोगकारी जीवाणुओं के विनिमय से भी बच जाते हैं । हाल ही में करोना से बचाने के लिए विश्व के सभी जन समुदाय ने भारत के हाथ जोड़ने वाली परंपरा को चुना और अपने आप को सुरक्षित रखा। । अमेरिकी वैज्ञानिकों ने फिस्ट बम्प से भी दस प्रतिशत रोगाणुओं के विनिमय का खतरा बताया था यानी हाथ जोड़ना स्वत: ही श्रेष्ठ सिद्ध हो चुका है।

भारत मे सदियों से नैतिकता के प्रश्न प्रत्येक क्षेत्र में उठते रहे है। विशेष रूप से जिन का सम्बन्ध समाज और संस्कृति से है। नीतिगत प्रश्नों का उठना स्वभाविक होता है। हिंदी भाषा आज पूरे विश्व में अपनी पहचान बनाये हुए। विश्व भर में जगह - जगह अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलनों का आयोजन भी हो रहा है। सिनेमा,

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सभ्यता एवं संस्कृति के प्रसार का एक माध्यम हिंदी है। सिनेमा, हिंदी भाषा, भारतीय सभ्यता और संस्कृति तीनों के ही वैश्विक प्रसार एवं प्रचार का वर्तमान समय में एक बहुत ही सशक्त माध्यम बन हुआ है। क्योंकि भारतीय अस्मिता की झलकियाँ हमें हिंदी सिनेमा में मिलती है और हिंदी सिनेमा को विदेशों को बहुत पसंद किया जाता है । आज भारतीय पुरातन ज्ञान, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता को विश्व गुरु के रुप में देखा जाता है,। भारतीय सभ्यता और संस्कृति की अवधारणा भाषा के बिना अधूरी है।वैसे ये भारत की पौराणिक , ऐतिहासिक, सामाजिक, राजकीय, साहित्यिक धार्मिक जैसी सम्पूर्ण अवधारणाओं को हमारे सम्मुख खड़ा किया है। साथ ही हमारी भाषा सभ्यता और संस्कृति और विदेशी संस्कृति के बीच हिंदी सिनेमा एक सेतु का काम कर रहा है। सिनेमा भाईचारों और विश्व बंधुत्व का सवाहक है। विश्व संस्कृति से संवाद स्थापित करने के लिए सिनेमा ने अंतर्राष्ट्रीय मंच पर भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों एवं विविधता को प्रदर्शित करने का असीम प्रयास किया है। शायद इसीलिए प.जवाहरलाल नेहरू जी ने सिनेमा को विश्व सभ्यता , संस्कृति एवं भाषा को देखने की खास खिडकी कहा था "। क्योंकि मानव इतिहास में मनोरंजन के सभी साधनों में सिनेमा उन सब से चरम उत्कर्ष है। और नाटक विधा की सीमाओं को लॉघकर सिनेमा सटीक काल्पनातीत चलचित्रांकन कर सकता है। अवतार, रोबोट, टायटनिक जैसी फिल्मे इसका बहुत सटीक उदाहरण प्रस्तुत करती है। इन फिल्मे में कैमरा और कल्पनाओं का कमाल देखा जाता हैं।

हिंदी सिनेमा विदेशी सिनेमा की कुछ अच्छी तकनीक तत्त्व एवं प्रवृत्तियाँ को अपना रहा है। परिणाम स्वरुप हिंदी सिनेमा का अपना एक स्तरीय अतर्राष्ट्रीय स्वरुप विकसित हो रहा है। हिंदी सिनेमा अपने विषयों और संवेदनाओं के सामर्थ के कारण सात समुन्दर पार जा विदेशों में भी लोकप्रिय हो पाया है। साथ ही पूरे विश्व में बसै भारतीयता अन्त स्थल की एकता को बल दे रहा है । और विश्वभर में फैली लघु भारतीयता को उसका स्वरूप दिखने में कामयाब भी हो रहा है । सचमुच सिनेमा कला अंतर्राष्ट्रीय भाषा एवं संस्कृतिक सीमाओं को लांघने वाला श्रेष्ठ माध्यम है। इसलिए सिनेमा विश्व भाषा और विश्व संस्कृति का प्रतिक बन गया है। विश्व में इस कला का स्वागत कर ते है। भारतीय प्रवासी नागरिक भारत से दूर रहकर भी छोटे और बडे पर्दे में समग्र भारत को देखकर भारत की निकटता दिखाई देती है ।विदेशी एवं प्रवासी भारतीयों के सामाजिक और संस्कृति

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

के परिप्रेक्ष्य मे हिंदी सिनेमा महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। और यही कारण है कि हिंदी भाषा और हिंदी सिनेमा का अधिपत्य आज विश्व के अनेको देशों में दिखाई देता है । सही मायने में सिनेमा एक सशक्त चलचित्रित भाषा है। जब से सिनेमा ने बोलना शुरु किया तब से हमारे महान सिनेमाकारों ने देश विदेश में व्याप्त सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर विषयों को सिनेमा का विषय बनाया है। सिर्फ विषय ही नहीं बनाएँ बल्कि देश-विदेश के जनमानस को समायानुकूल मुद्दों से परिचित कराते हुए उन्हें सोचने समझने के लिए बाध्य किया है।सिनेमा प्रवासी भारतीय के लिए स्वदेश की स्मृतियाँ है। स्वदेश से कटकर कर रहने वाले प्रवासी भारतीय की अधूरी जिन्दगी को पूरा करने का जरिया भी है।

यह विज्ञान का वरदान ही है जो सिनेमा का सामर्थ साबित कर रहा है कि आज हिंदी सिनेमा सेटेलाइट और इन्टरनेटे की अत्याधुनिक टेकनोलॉजी से सात समुन्दर पार विश्व के कोने कोने में रहने वाले विदेशियों और प्रवासी भारतियों तक उसी पल पहुँच रहा है। इन सिनेमाओं ने भारतीयों के अंतरंग में झाँकने का प्रयास किया है। आज सिनेमा के क्षेत्र में ऐसा मोड़ आया है कि मानवीय संवेदनाओं की सोच और संवेदनाओं के क्षितिज को असीम विस्तार दे रहा है क्योंकि सिनेमा भाषिक सीमाएँ लाँघने की सक्षम विधा है। ऐसी कोई भी कला नहीं जो सिनेमा जैसा सर्वगुण संपन्न हो । इसलिए हिंदी सिनेमा आज न केवल अंतर्राष्ट्रीय पुरुषकार जीत रहा है। बल्कि हिंदी सिनेमा के निर्देशकों एवं सिने कलाकारों को अतर्राष्ट्रीय ख्याति भी दिला रहा है ।

विदेशी एवं प्रवासी भारतीय द्वारा संचलित स्वमंसेवी ,सरकारी संस्थाओं का अवदान विश्व भर में हमारे भारतीय लोग जिनेमें कुछ मूल भारतीय है तो कुछ पढ़ने पढ़ाने के लिए ,तो कुछ इंजिनियर,डॉक्टर, व्यवसाय या नौकरीयों के लिए रच बस गए हैं ।हिंदी जिस तरह से आम भारतीय की भाषा है उसी तरह विश्व भर में रचे बसे भारतीय प्रवासियों की भी अभिव्यक्ति की भाषा है। भारतीय मूल के लगभग 5 करोड लोग विश्व के उन देशो में रचे बसे है। फिजा ,मॉरीसेस, सूरीनामा, गियाना, नीदरलैड, त्रिनीडंडा,कनॅडा,रुस, अमेरिका स्वीडन डेनमार्क,जर्मन नार्वे ,नेपाल श्रीलंका , पाकिस्तान, थाईलैण्ड, सिंगापुर, मलेशिया, न्यजीलैण्ड, इंडोनेशियाँ, दुबई,कुवैत इटली, जापन रुमानियाँ,हंगेरी, यूरोप के आदि इन सभी देशों के लोग हिंदी को अपनी पूर्वोजों की भाषा मानते है। और शायद यह भी एक कारण हैं कि वे हिंदी बोलना और हिंदी सिनेमा देखना पसंद करते है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at:
Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

हिंदी भाषा और हिंदी सिनेमा की लोकप्रियता का दूसरा कारण व्यवसाय और बाजार की जरुरत है। जिनमें कार्टून नेटवर्क, सोनी, डिस्कवरी जैसे ढेरों चैनल हिंदी को लेकर विश्व भर के देशों में घुसपैठ कर रहे है। लेकिन विश्वभर के रचे बसे भारतीय विशाल जनसमुदाय को अपना दर्शक बनाने के लिए व्यवसायिक विवसता से मजबूर होकर इन सारे चैनलों मे हिंदी को अपनाना ही बेहतर लग रहा है। विश्व बाजार के मंच पर हिंदी और हिंदी सिनेमा की क्षमता विदेशियों के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बडे ही मुनाफे का कारण बन गया है। केवल मुनाफा ही नहीं बल्कि अंतर्राष्ट्रीय कीर्ति और सम्मान भी इसी कारण मिला है। आज लगभग 200 विज्ञापनों में हिंदी की धाक जमी हुई है। आज सभी फिल्म निर्माता , अंग्रेजी,चाइनीज, जापानी, रशियन आदि भाषाओं को हिंदी में डब करके प्रस्तुत कर रहे है। क्योंकि हिंदी उनके लिए सोने का अंडा देनेवाली मुर्गी साबित हो रही है। आज हम यदि खोज करे तो स्त्रोत से प्राप्त आँकडे बताते है कि देश और विदेशों में सर्वाधिक सिनेमा हिंदी में अनुवादित एवं प्रदर्शित की जा रहे है, टायटैनक,अवतार,स्पाई,किडस, हैरी पोटर, स्पाइडर मैन ये फिल्में भारत ही नही बल्कि पूरे विश्व भर में बसे प्रवासी भारतीय मे भी देखी और पसंद की जाती है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ हो या नामचीन भारतीय निर्देशक हो वे सभी अपने कार्यलयों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भले ही करते हो परन्तु व्यवसायिक प्रतियोगिता में उनको हिंदी की जरूरत की जरुरत पडती है। अपने उत्पादनों को विश्वभर के प्रवासी भारतीय समाज की आवश्यकतानुरुप पहुचाने के लिए उन्हे हिंदी का सहारा लेना पडता है। चाहे उसमें कनाडा का एफएम रेडियों ही क्यों न हो भले ही अंग्रेजी का तड़का हो लेकिन दाल हिंदी की ही रखनी पडती है, यह भारतीय एवं पाश्याच्य सिनेमाकारों की विवशता भी है और हिंदी के सामर्थ का प्रमाण भी.

विश्व भर के 32 देशों से अधिक में बसे 5 करोड से अधिक प्रवासी भारतीय जनसमुदाय की शिक्षा के लिए हिंदी का अध्ययन और अध्यापन शुरू हो रहा है। अमेरिका जैसे विकसित राष्ट्र के लगभग 90 विश्विविद्यालयों में ही हिंदी का अध्ययन अध्यापन हो रहा है। इसके अलावा सैकडों और भी छोटे बडे केन्द्रों में भी पी.एच.डी. शोध कार्य हिंदी में हो रहा है। आज तो स्थिति इतनी बेहत्तर है कि स्वयं विश्वभर के हिंदी विद्वान् हिंदी में लेखन, अध्यापन, शोधकार्य भी करवा रहें है। और अब विदेशी अपने निर्देशन में हिंदी सिनेमा बना रहे है

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

इससे बेहत्तर हिंदी की अंतर्राष्ट्रीय स्थिती और स्वरुप क्या हो सकता है किंतु आज विश्व भर में हिन्दी भाषा मे सिनेमा के अलावा किसी और भाषा का सिनेमा लोकप्रिय नहीं है। आज महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों एवं हिंदी हितैशी संस्थाओं को महा विद्यालय एवं विश्वविद्यालय की कक्षाओ में हिंदी सिखाने समझाने में जितना समय लगता है। उससे कही बहुत कम समय में हिंदी सिनेमा अपने दृश्यों और गीतों के माध्यम से समझा जाता है। सांस्कृतिक शब्दावली व्रत उपवास, शादी-ब्याह के प्रोग्राम मुहावरे, कहावते, तीज- त्यौहारो में रंगो की होली और दीप की दीवाली आदि के द्वारा हिंदी सिनेमा समग्र भारतीयता के दर्शन कराता है।फिल्में भले ही मनोरंजन का उत्तम माध्यम है लेकिन उससे कही अधिक आज के युग में वह ज्ञानधर्मी ,प्रबोधन, समुपदेशन, प्रशिक्षण एवं शिक्षा दिक्षा को सबसे बेहतर जरिया है ।वह और दृश्य श्रव्य माध्यम को दिखाकर या देखकर सिखने और सिखाने में बहुत अंतर है। क्योंकि सिनेमा में जो भाव अभिनय के समर्थ के साथ दिखाए जाते है वे किताबों के द्वारा अनुभव नहीं किए जा सकते। हिंदी सिनेमा न पाठ्य पुस्तकों को संगीत , भाषा, भाव आदि के द्वारा परदे पर मुखरित किया है। भारतीय अभिभावक भी अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए भारतीय संस्कृति और सभ्यता से परिचित करने तथा हिंदी भाषा सिखाने अपने बच्चों को हिंदी सिनेमा देखने के लिए प्रोत्साहित करते है।

विश्व भर में अनेक अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाएँ एवं समाचार पत्र हिंदी में प्रकाशित होते है। तथा रेडियों भी अक्सर अपने हिंदी सिनेमा से केंद्रित प्रोग्रामों के द्वारा हिंदी के प्रसार में अपना योगदान देता है तथा विश्व भर में हजारों विद्वान कलाकार अपनी कला की अभिव्यक्ती हिंदी जनसंचार माध्यम के जरिए प्रस्तुत करते है। ये सारे संदर्भ और प्रमाण इस बात के साक्षी है कि संसार के नक्से में बडी संख्या में और ज्यादा मात्रा में समझी जाने वाली भाषा हिंदी ही है। और आज हिंदी भाषा जनसंचार में अंग्रेजी के सामने आ डटी है। ऑकडो का विश्लेषण यह भी सिद्ध कर र हा है कि चीन की भाषा मंडारिन के बाद अधिक हिंदी भाषा बोली जा रही है। विश्व में हिंदी का प्रयोग करने वालों की संख्या चीन से अधिक है।आज अब हिंदी प्रथम स्थान पर है(श्त्रोत दैनिक हिंदुस्तान २५ अप्रैल २००५) अमेरिका जैसे देश में बी.बी.सी. नई दुनियाँ , दैनिक जागरण, नवभारत, वेब दुनिया, भारतीय दर्शन, राजस्थान पत्रिका जैसे जनसंचार माध्यमो में भी हिंदी सिनेमा की चटपटी , मसालेदार

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

खबर तथा विज्ञापन छपते रहते है। इतना ही नहीं इन्टरनेट की दुनिया में एक क्लिक पर प्रवासी भारतीय के लिए नई प्रदर्शित होने वाली फिल्में उनका कथ्य तथा विज्ञापन धर्मी सूचनाएँ उपलब्ध होती है। संचार माध्यमों के इलेक्ट्रानिक मीडिया में टी.वी. चैनलों की भरमार है। स्टार , जी सिनेमा, सोनी जैसे चैनलों पर रामायण, महाभारत, पारिवारिक, हास परिहास, कॉमेडी सीरीयलों की भरमार है। जिनमें से कुछ सीरीयल नच बलिए, पवित्र रिश्ता, रब ने मिला दी जोडी, बात हमारी पक्की है, बेटियाँ, छोटी बहु, न आना इस देश मेरी लाडों, सास बिना ससुराल ,सास भी कभी बहू थी ,तारक मेहता का उल्टा चश्मा आदि काफी लोकप्रिय है। जिन्होंने देखने में विदेशी भी पसंद करते है। पाकिस्तान हो या तुर्मेनिक्स्थान ,उज्बेकिस्तान , अमेरिका हो या रशियाँ दुनियाँ के किसी भी कोने का व्यक्ति इसके देखने में अपनी रूचि दिखता है ।

हिंदी भले ही भारत की राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई हो लेकिन यह किसी एक देश की भाषा नहीं बल्कि पूरी दुनिया में इस भाषा को लेकर प्रयोग किये जा रहे हैं। कहीं हिंदी को लेकर शोध संस्थान खुल गए है तो कहीं कहीं पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का आयोजन भी बड़ी कामयाबी के साथ हो रहा है जिस का ताजा उधाहरण कनाडा में 2018 में प्रथम अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन और विश्व साहित्य रथ की गूंज जो कनाडा की सड़कों पर देखा जाता है ।

विदेशों में बसे प्रवासी भारतीय अपने देश की परंपरा , भाषा, अपने देश की संस्कृति आदि का समन्वय सिनेमा में देखते है। भारतीय मूल के लोग जब विदेश गये तो अपने साथ भारतीयता के अनेक प्रतिक जैसे सभ्यता,संस्कृति, तीज त्यौहार, रीति रिवाज,पूजा आदि खान पान अपने मानवीय मूल्य आदि को साथ लेकर गए और जहाँ रहे वहाँ उन्होंने एक लघु भारत का निर्माण किया उनके अवचेतन में बसी भारतीयता उन्हे सिनेमा में दिखाई देती है। हिन्दी सिनेमा का रिश्ता भारत से जुडा रहता है। अपनी जुबान और संस्कृति से जुडे रहने का मोह उन्हें सिनेमा से बाधता ही नही बल्कि उन्हे कुछ क्षणों के लिए अपने देश के करीब भी ले आता है। बल्कि भारत में होने का एहसास कराता है। आज जीवन की तमाम समग्रता को लेकर सिनेमा उनके

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

विचारों एवं भावनाओं साधारणीकरण करके उन्हे अपनी गाँव की ग्राम सभ्यता एवं मिट्टी की गंध से जोडे रखता है। परदेश, दिलवाले दुल्हानियाँ ले जायेगे , चाँदनी, कभी खुशी- कभी गम , आ अब लौट चले जैसी फिल्मों में प्रवासी भारतीय को देश से जुडे रहने के कारणों को दिखाकर द्रवित करती है। साथ ही उनका भारतीयपन पुन जीवित हो उठता है ऐसे ढेरो कारण है जो उन्हे भारतीय सिनेमा से जोडे रखते है। सिनेमा में दिखाई गई विभिन्न बोलियों के गीत , शादी ब्याह की रस्में आदि उनमें कौतुहल जिज्ञासा भी पैदा करती है और लुभाते भी है। सिनेमा के दृश्य प्रसंगों से उनको और अधिक महत्वाकांक्षा और कल्पनात्मक ,भावानात्मक रुप से बाँधते है। इसलिए प्रवासी भारतीय में हिंदी सिनेमा के प्रति अस्मिता का भाव नस नस में समाया है। उनको अधिक अच्छा लगता है कि जिस भाषा में इन्होंने जीवन अनुभवों को जिआ समझा तथा जिनके साथ बडे हुए सिनेमा में वही सब कुछ देखना व गीतो में सुनना बडा ही अपना पन लगता है।

निष्कर्ष - भारतीय भी अपने विदेशी दर्शक के लिए अपने उत्तरदायित्व को बाखूबी निभाते हुए उन्हें मूल्यधर्मी सिनेमा से जोडे रखते है। और इसी वजह से प्रवासी भारतीय के जीवन का अविभाज्य हिस्सा बन जाता है। आज हमारी हिंदी फिल्में विश्वभर के सिनेमा घरों के बॉक्स ऑफिस पर मुनाफा कमाने के साथ लोकप्रियता का शिखर छू रही है। उसका सारा श्रेय प्रवासी भारतीयों को जाता है। कुछ फिल्में जो विदेश में रहने वाले भारतीयों की सामाजिक, पारिवारिक, दाम्पत्य जीवन संबंधी मूल्यों की टकराहट तथा उनकी व्यस्तता में डूबी दुविधा मन:स्थिती के बखूबी अभिव्यक्त हो रही है जैसे कभी अलविंदा न कहना , न्यूयॉर्क, माय नेम इज खान, नमस्ते लंडन, उपकार, पूरब पश्चिम, आ अब लौट चले , दिलवाले दुल्हनिया ले जायेगे ,परदेश, बागबान आदि फिल्में विदेशों में भी प्रसिद हो रही है। साथ ही फिल्मों के कुछ गीत प्रवासीयों की जुबानी जैसे रच बस गयें है जैसे नाम फिल्म का गीत चिठ्ठी आई है आई है। चिठ्ठी आई है बडे दिनों के बाद हम बे वतनो को याद, बतन की मिठ्ठी आई है। तथा दिलवाले दुल्हनियाँ ले जायेगे का गीत "घर आजा परदेशी तेरा देश बुलाए " देश की हुक उठाता है तो परदेश का गाना "ये दुनियाँ एक दुल्हन दुल्हन के माथे की बिंदियाँ आई लव माय इण्डियाँ" के बोल

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 2,February 2017
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

उनकें अंदर भारतीयता और भारतीय संस्कृति की झलक देखने को मिलती है । तो वही धार्मिक , पौराणिक एवं ऐतिहासिक फिल्में प्रवासी भारतीयों को कई संदर्भो में अपने देश से दूर रहकर भी मानसिक और भावनात्मक स्तर पर अपनी जन्मभूमि, से जुडे रहने की याद दिलाती रहती है। ये उनकी मनोवैज्ञानिक जरुरत भी है। और सिनेमा उसकी जरुरत को पूरा भी करता है जो भारतीय संस्कृति का संवाहक भी है।

आज हिंदी सिनेमा हमारी भारतीय संस्कृति तथा प्रान्तीय बोलियो को, लोकगीतो कों,दीपों की दिवाली, रंगों की होली,भाई बहन का रक्षाबंधन , ईद, रोजा जैसे त्यौहारो को तथा भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को अपने अंदर समेट रहता है। इन सारे प्रवाहों को समेटने के कारण ही हिंदी सिनेमा की सरिता विश्वभर में प्रवाहित हो विशाल सागर का रूप धारण कर रही है। हम कह सकते है हिंदी सिनेमा की अन्तर्राष्ट्रीय स्वरुप भाषिक संस्कृति चेतना को उर्जावान बना रही है। हिन्दी सिनेमा भाषिक एवं सांस्कृतिक चेतना का वहन करने वाली एवं विश्व के मात्र चित्र को छूनेवाली विज्ञान अधिष्ठित सर्वोत्तम कलाओं में विलक्षण, उर्जावान, अपने आपमें सर्वगुण संपन्न भाषा है। विदेशी एवं प्रवासी भारतीयों के लिए हिन्दी सिनेमा अपनी भाषिक , सांस्कृतिक, पौराणिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक चेतना से सर्वश्रेष्ठ कला माध्यम है । विज्ञान तकनिक और सर्व कलाओं का समन्वय करके सिनेमा ने कॅमेरा रुपी कलम से सारे विश्व को सिनेमा का कायल बना दिया है। अंत में हिंदी सिनेमा व मीडिया की विश्व व्यापी एवं विश्व मंचीय लोकप्रियता की विराटता को देखते हुए ये मंगल कामना करता हूँ कि हिंदी सिनेमा व भारतीय संस्कृति ऐसे ही विश्व भर में रचे बसें । सभी भारतीय अपनी भाषा,सभ्यता और संस्कृति के संवर्धन में अपना बहुमूल्य योगदान देता रहे।

सन्दर्भ –

1प्रवासी भारतीयों की हिंदी सेवा,श्रीमती कैलास कुमारी सहाय .

2 विदेशों में हिंदी पत्रकारिता डॉ पवन कुमार जैन .

3 ब्रिटेन में हिंदी ,श्रीमती उषा राज सक्सेना २००५.

4 विदेशी भाषा का अंतर्राष्ट्रीय सन्दर्भ –भोला नाथ तिवारी ,ईस्ट आजाद नगर दिल्ली -५१ .

5 विदेशों में हिंदी साहित्य का अध्ययन –प्रो वसुधा डालमिया बिजनौर टाइम्स १६ नवम्बर २०१२.

6 राज भाषा हिंदी –डॉ कैलाश चन्द्र भाटिया (१९९४)वाणी प्रकाशन दिल्ली.

7 सविधान सभा और राजभाषा भारती गृह मंत्रालय भारत सरकार –डॉ शंकर दयाल सिंह .

8 हिंदी भाषा और सरंचना –प्रो सूरज भानसिंह (१९९१)दिल्ली .

9 मीडिया की बदलती भाषा –डॉ अजय कुमार सिंह ,लोक भारती प्रकाशन इलाहबाद २०१२ .

10 मीडिया का यथार्थ –डॉ रत्न कुमार पाण्डेय ,वाणी प्रकाशन दिल्ली २००८ .

11हिंदी भाषा साहित्य और संस्कृति –डॉ पूरनचंद टंडन ,सतीस बुक डिपो दिल्ली ११०००५ .

12 जनसंचार –डॉ हरीश अरोड़ा ,युवा साहित्य चेतना मंडल दिल्ली .

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

हरियाण का लोक साहित्य और संस्कृति

डॉ कमराज सिंधु

प्रस्तावना -

हरियाणा लोक साहित्य और संस्कृति की अपनी देश में अलग पहचान एवं विशेषता है। लोक साहित्य और संस्कृति का सम्बन्ध किसी देश व क्षेत्र विशेष के सामान्य जन - समुदाय से होता है। समाज में प्रचलित विभिन्न क्रिया - कलाप , परम्पराएँ , अचार - विचार संस्कार , प्रथाएँ , कर्मकाण्ड , आस्था एवं विश्वास , लोक साहित्य और संस्कृति के आधारभूत तत्व माने जाते है। किसी देश या क्षेत्र के नागरिकों की पहचान उनके अपनी सभ्यता , संस्कार रहन - सहन तथा बोली - भाषा साहित्य से की जाती है। जो उस देश या क्षेत्र की संस्कृतिक वैशिष्टय के द्योतक है। सामान्य जनता के जीवन में व्यवहृत होने वाले विभिन्न परिस्थिगत अनिवार्य धर्म तथा कर्म न सिर्फ समाज को गतिशील बनाये रखते है बल्कि उन्हें क्षेत्र - विशेष को एक अलग पहचान दिलाते मे सहायक भी है। लोक साहित्य और संस्कृति के द्वारा समाज की आर्थिक , राजनीतिक , सामाजिक व धार्मिक व्यवस्था का प्रवाह सामूहिक रूप से निरंतर गतिशील रहता है। साहित्य और संस्कृति व्यक्ति एवं समाज के विकास का परिचायक होती है और समाज मजबूत होता है। लोक जीवन ही साहित्य और संस्कृति का अक्षय भण्डार है। साहित्य और संस्कृति समाज को आकार देता है। मानव आदिम काल से अपनी बौद्धिक शक्ति के द्वारा समाज के सभी प्राणियों को प्रभावित एवं आश्चर्यचकित करता रहा है यही लोक साहित्य और संस्कृति मानी जाती है।

लोक साहित्य -

हरियाण का लोक साहित्य और संस्कृति भारत मे बड़ी समृद्ध संस्कृति के रूप मे दिखाई देता है। हरियाणा का नाम लेते ही हमारे मस्तिष्क में एक ऐसे प्रदेश की छवि उभर आती है जिसकी पुरातन धरोहर अत्यंत समृद्ध है और वर्तमान में भी जो देश के सर्वाधिक समृद्ध राज्यों में से एक माना जाता है। वैदिक भूमि हरियाणा भारतीय सभ्यता का पालना कर

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

रही है। भारतीय परम्पराओं में इस क्षेत्र को सृष्टि की आधात्री की मान्यता दी जाती है, जहां ब्रह्मा ने प्रथम यज्ञ करके सृष्टि का सृजन किया था वह स्थान भी हरियाणा मे पड़ता है। सृजन के इस सिद्धांत की पुष्टि पुरातत्वविद गाय ई.पिलग्रिम की पुरातात्विक खोज में भी मिलता है। वामनपुराण के अनुसार राजा कुरु ने कुरुक्षेत्र की पावन भूमि में सात कोस के क्षेत्र में भगवान शिव के वाहन नंदी को सोने के धार-फार से युक्त हल में जोतकर कृषियुग की शुरुआत की थी। हरियाणा प्रदेश भारत मे खान पान की दृष्टिकोण से समृद्ध माना राज्य जाता है ।हरियाणा प्रदेश की विश्व मे पहचान है।

हरियाणा के नाम की उत्पत्ति के संबंध में बहुत सी व्याख्याएं हैं | हरियाणा एक प्राचीन नाम है | पुरातन काल में इस भू-भाग को ब्रह्मवर्त, आर्यवर्त और ब्रह्मोप्देष के नाम से जाना जाता था | ये नाम हरियाणा की इस धरा पर भगवान ब्रह्मा के अवतरण; आर्यों का निवास स्थान और वैदिक संस्कृति के प्रचार-प्रसार पर आधारित हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह क्षेत्र सृजन की भूमि है और यह धरा स्वर्ग के समान है। इसके अन्य नाम बहुधान्यक व हरियानक इस क्षेत्र में खाद्यान्नों और वनस्पति की प्रचुरता के परिचायक हैं।' जिला रोहतक के बोहर गांव से मिले शिलालेख के अनुसार इस क्षेत्र को हरियानक के नाम से जाना जाता था। यह शिलालेख विक्रमी सम्वत् 1337 के दौरान बलबन काल से सम्बन्धित है। सुल्तान मोहम्मद-बिन-तुगलक के शासनकाल के एक पत्थर पर 'हरियाणा' शब्द अंकित है। धरणीधर ने अपनी रचना अखण्ड प्रकाश में लिखा है कि 'यह शब्द 'हरिबंका' से लिया गया है, जो भगवान हरि की पूजा भगवान इंद्र से जुड़ा है। एक अन्य विचारक, गिरीश चंदर अवस्थी इसकी उत्पत्ति ऋग्वेद से मानते हैं, जिसमें हरियाणा नाम को राजा (वासुराजा) के नाम के साथ सार्वनामिक विशेषण के रूप में प्रयोग किया गया

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

है। उनका मत है कि इस क्षेत्र पर उस राजा ने शासन किया था और इस तरह से इस क्षेत्र का नाम हरियाणा उनके नाम पर पड़ गया।

हरियाणा के लोक साहित्य का गौरवपूर्ण अतीत अनेक मिथकों, किवदंतियों और वैदिक संदर्भों से भरा हुआ है। महर्षि वेदव्यास ने इसी पावन धरा पर महाभारत काव्य की रचना की। पांच हजार साल पहले यहीं पर महाभारत के युद्ध में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को गीता का दिव्य संदेश देकर कर्तव्यबोध कराया था। उन्होंने कहा था कि 'हे मनुष्य तू कर्म कर, फल की चिंता मत कर' तभी से कर्म का यह दर्शन मानवमात्र का प्रकाश स्तंभ की तरह हर समय मार्गदर्शन कर रहा है।

हरियाणा क्षेत्र अनेक युद्धों का साक्षी रहा है क्योंकि यह उत्तर भारत का प्रवेश द्वार है। हूणों, तुर्कों और तुगलकों ने अनेक बार भारत पर आक्रमण किया और हरियाणा की भूमि पर निर्णायक लड़ाइयां लड़ी गईं। 14वीं शताब्दी के अंत में तैमूरलंग ने इसी क्षेत्र से दिल्ली में प्रवेश किया था। 1526 में मुगलों ने पानीपत की ऐतिहासिक भूमि पर इब्राहिम लोधी को पराजित किया। पानीपत में ही 1556 में एक ओर निर्णायक युद्ध लड़ा गया, जिसने सदियों तक मुगलों को अपराजित शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। 18वीं शताब्दी के मध्य में मराठाओं ने हरियाणा पर अपना शासन स्थापित किया। भारत में अहमदशाह दुर्रानी के आक्रमण, मराठा शक्ति के उत्थान और मुगलों के पतन के बाद अंततः अंग्रेजी शासन का आगमन हुआ।

हरियाणा का समाज सदैव विभिन्न जातियों, संस्कृतियों और धर्मों का मिश्रण रहा है। इस भूमि पर ये सब मिले, आपस में एक-दूसरे से जुड़े और एक सच्चे भारतीय बनकर निखरे। यहीं पर हिन्दू संतों और सिख गुरुओं ने विश्व प्रेम ,सद्भाव और भाईचारे का संदेश दिया।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

महाकवि सूरदास का जन्म हरियाणा के जिला फरीदाबाद में स्थित गांव सीही में हुआ था, जो भारतीय संस्कृति और साहित्य का एक और केन्द्र माना जाता है। भगवान श्री कृष्ण की कथा हरियाणा के हर आदमी की जुबान पर है। पशुओं के प्रति प्रेम और आहार में दूध की प्रचुरता के कारण इसे दूध-दही की नदियों वाले प्रदेश के रूप में विश्वव्यापी प्रसिद्धि मिली।

हरियाणवीं सांग, रागनी, हरियाणवी वेशभूषा, हरियाणवीं हास्य व्यंग्य और खान-पान इस लोक साहित्य और संस्कृति के विशेष अंग है। हरियाणा को एक समृद्ध सांस्कृतिक विरासत पर गर्व है जो वैदिक काल में वापस जाता है। राज्य लोकगीत में समृद्ध है। हरियाणा के लोगों की अपनी परंपराएं हैं। ध्यान, योग और वैदिक मंत्रों का जप करने की उम्र के पुराने रीति-रिवाजों को अभी भी जनता द्वारा देखा जाता है। मौसमी और धार्मिक त्यौहार इस क्षेत्र की संस्कृति की महिमा करते हैं। हरियाणा के लोक साहित्य की परंपरा का एक अनूठा दृश्य आप यहा आकर देख सकते हो।

लोक लोक साहित्य लोक कथाओं के अध्ययन से यह पाया है कि हरियाणा के लोक साहित्य में प्रचुर मात्रा में जीवन के जुड़े वह सब पहलू जिसके अंदर हमारी लोक मान्यताएं हमारा व्यवहार खानपान हमारी संस्कृति हमारे साहित्य और लोकगीतों के साथ अन्य विधाएं भी इसमें देखने को मिलती है और जीवन के अनेक ऐसे पड़ाव ऐसे रंग जो हम अपने दैनिक जीवन में व्यवहार के रूप में प्रयोग करते हैं हरियाणा के लोक साहित्य में चाहे वह सावन के गीत हैं चौखट के गीत हैं , देवी देवताओं के गीत हैं , प्रेम के गीत इन सब का तालमेल हरियाणवी लोक साहित्य और संस्कृति में देखने को मिलता है हरियाणा में स्त्रियों का प्रमुख त्यौहार तीज माना जाता है तीज के दिन चारों तरफ झूले झूले दिखाई देते हैं 80-80 वर्ष की हमारी माताएं हैं जो झूलों पर बैठ कर अपने प्रेमी को बुलाती है और वह झूले से ही उस टहनी को छूने का प्रयास करते हैं ।सावन के गीतों में

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

रोमांस का पर्याप्त भंडार है। किसी झूला झूलती नायिका का नायक से प्रथम मिलन होता है तो कोई नायक नायिका को भीगने से बचाने के लिए कभी उस पर चादर ओढ़ आता है तो कभी छतरी और कहीं कोई राह चलता रसिक व्यक्ति झूले पर बैठी किसी सुंदरी की सुंदरता का वर्णन करता है ।गीत के माध्यम से उसको बताने का प्रयास करता है झूला झूलती स्त्रियों के गीतों में सास और ननद की सबसे अधिक बात मिलती है। एक गीत के माध्यम से सासु तो वीरा चूल्हे की आग ननंद भादो की बिजली और ऐसे ही हरियाणवी लोक साहित्य में अनेकों ऐसे संदर्भ आपको मिलेंगे जिसमें हम यह कह सकते हैं कि हरियाणा का लोक साहित्य और संस्कृति बहुत समृद्धि और प्राचीन है।

सावन मास हरियाणवी लोक साहित्य और लोक-संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सावन मास में तीज का त्योहार हरियाणा में बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इस अवसर पर युवतियाँ व महिलाएं साज-श्रृंगार करती है व हाथों और पैरों पर मेंहदी लगाती है। माता-पिता अपनी विवाहिता बेटियों के ससुराल वस्त्र व श्रृंगार की सामग्री भेजते हैं। तीज के त्यौहार पर बेटियों की अपने पिता के घर आने की प्रथा है। पहले समय में तीज के दिन किसी तालाब के पास मेला लगता था , जहां पेड़ों पर झूला डालकर 'तीज के लोक गीत' गाती हुई बालिकाएं व महिलाएं झूला झूलती थीं। ग्रामीण परिवेश में अभी भी कहीं-कहीं ऐसे आयोजन होते हैं लेकिन आधुनिक भारत में पारम्पारिक रीति-रिवाज अब लुप्तप्राय हैं।

हरियाणा प्रदेश में सरस्वती नदी शदियों से यहाँ बहती रहे उसकी महत्ता आज पूरे विश्व में देखी जा सकती है ।यहां जन-जन में हर्षोल्लास देखने को मिलता है। यहाँ अनेकों अनेक ऐसे अवसर हैं जिससे प्रदेश की यु वा , युक्तियां अपने लो क मंगल के लिए और लोक साहित्य के लिए प्रेरणादायक बने हुए। हरियाणा प्रदेश वैसे तो कृषि प्रधान प्रदेश के रूप में जाना जाता है ।लेकिन फिर भी यहां के रीति रिवाज यहां के त्यौहार या का खानपान

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बहुत अधिक महत्वपूर्ण है । लोकजीवन की सबसे बड़ी विशेषता उसकी स्वाभाविक है। इसके वास्तविक रूप जानने के लिए हमें लोक जीवन का अध्ययन करना पड़ेगा ।यह लोक जीवन ही लोक साहित्य को जन्म देता है ।। लोकाचार मानव के व्याहर को और समाज के समस्त जीवन को संचालन करता है।

सुडोल- हरियाणा प्रदेश के युवाओं का शरीर उनकी छवि लंबे कद काठी और बलिष्ठ शरीर और दम दमकता चेहरा अलग से ही दिखाई देता है ।यहां का मुख्य पहनावा जो प्रदेश के बुजुर्गों में आपको दिखाई देगा लाल चमड़े की जूतियां धोती कुर्ता और सर पर पगड़ी और कहे तो बहुत सारे ऐसे बुजुर्ग हैं जो रंग बिरंगी पकड़िया पहनते हैं। और मूछों पर ताव देते दिखाई देते हैं। अधिकतर बूढ़े सफेद रंग की पगड़ी पहनना पसंद करते हैं। हरियाणा प्रदेश के अनेक क्षेत्रों में अलग-अलग पकड़ियों का भी प्रचलन है। शरीर पर खादी का कुर्ता हाथ में लाठी और मचलती चाल यहां के बुजुर्गों में देखी जाती । शालीनता और सद्भाव यहां हरियाणा के सभी बुजुर्गों में विद्यमान है। हरियाणा प्रदेश हाजिर जवाबी के लिए देश मे जाना जाता है। यहां का साहित्य इतना मजेदार और प्रासंगिक भी है। हंसी ठिठोली यहाँ हर मनुष्य में देखी जाती।

आवास- इस प्रदेश के गांव व्यवस्थित हैं अच्छे ढंग से बसे हुए हैं। भले ही पुराने समय मे मकान कच्चे हुआ करते थे लेकिन लोगों के दिल अच्छे हुआ करते थे । जब से मकान पक्के हुए हैं यहां दिल भी पक्के हो गए हैं । कच्ची ईंटों का बनाया हुआ घर ढूंढ कहलाता था । लेकिन आज गांव में लगभग पक्के मकान बने दिखाई देते है। गांव में हवेली का प्रचलन आज से 50 वर्ष पूर्व समाप्त हो गया ।प्रदेश के अनेक ऐसे गांव हैं जिसमें हवेली आज भी देखने को मिलती जाती है। मंदिर ,,चौपाल धर्मशालाएं पर किसी दानी पुरुष का नाम आज भी अंकित है। चौपाल या धर्मशालाएं जो गांव में बनाई जाती थी किसी प्रसिद्ध सांगी को बुलाकर पैसा इकट्ठा किया जाता था ।चंदा इकट्ठा करने का सबसे अच्छा साधन

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सांग ही माना जाता था। यह कार्य पूरे गांव के सहयोग से ही संभव हो पाता था चाहे किसी गरीब की बेटी की शादी हो या कोई चौपाल या धर्मशाला बनानी हो चंदा इकट्ठा करने का साधन उस समय केवल सांग परंपरा ही था।

कुआँ- हरियाणा प्रदेश के गांव में सुबह हो या शाम हो कुएं पर अधिक चहल-पहल देखी जाती है। मानों कुएं पर मेला लगा हो ऐसा प्रतीत होता है । सिर पर मटका या टोकणी हाथ में नेजू और बाल्टी लिए नए वस्त्रों पहन कर पनिहारी कुए की ओर जाती दिखाई देती है। उसमें नई नवेली हो और चाहे कोई और पूरे सिंगार के साथ कुए पर पानी भरने जाती। लगभग स्त्रियां जब कुए के लिए पानी भरने जाती है वह संगीत और गीतों के साथ ही अपना सफर तय करती है। स्त्रियां हार सिंगार करके घुंघट करके ही जाती हैं। कोकिल कंठ कुंजन को की किंकणी नाडा और रमझोल के संगीत से सजाकर जब छम छम करके चलती है तो निकट से गुजरने वाले दर्शक ठगे से रह जाते हैं ।यही हरियाणा के लोक साहित्य की पहचान है लोकलहरी की एक पंक्ति में इसका उल्लेख इस प्रकार हुआ है । हुई झरन झरन रंजन चली नीर भर न रल मिल के दो चार सखी। कुआं तो मानो गांव की औरतों के लिए क्लब के समान है औरतें अच्छे से अच्छे कपड़े पहन कर आते हैं और आपस में ठिठोली करती।

सावन के गीत -

तीजां का त्योहार रितु सै सामण की
खड़ी झूल पै मटकै छोह्ली बाहमण की
क्यूं तैं ऊंची पींघ चढ़ावै
क्यूं पड़ कै सै नाड़ तुड़ाव
योह् लरज-लरज के जावै डाल्ही जामण की
तीजां का त्योहार रितु सै सामण की

इस सावन के गीत से हम अपने दैनिक जीवन कि बात करते है यहाँ सावन के गीत का क्या महत्व है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

नांनी नांनी बूंदियां मीयां बरसता हे जी

हां जी काहे चारूं दिसां पड़ेगी फुवार

हां जी काहे सामण आया सुगड़ सुहावण

संग की सहेली मां मेरी झूलती जी

हमने झूलण का हे मां मेरी चाव जी

हां जी काहे सामण आया सुगड़ सुहावणा

सखी सहेली मां मेरी भाजगी जी

हां जी काहे हम तै तो भाज्या ना जाय

पग की है पायल उलझी दूब में जी

नांनी नांनी बूंदियां मीयां बरसता जी

हां जी काहे चारूं पास्यां पड़ेगी फुवार

पं. लखमीचन्द ने अपने साँग 'पद्मावत' में नायिका से कहा है:-

लाख टके का हे माँ मेरी बीजणा हे री कोय धर्या पुराणा हो

खड़िए मैं भीजूं हे माँ मेरी बाग मं री।

काली घटा छाई हे माँ मेरी उगमणी री इन्द्र बरसै मूसलाधार

खड़िए मैं भीजू हे माँ मेरी बाग मं री।

लोक साहित्य का स्वरूप -

साधारण जनता से संबंधित साहित्य को लोकसाहित्य कहना चाहिए। साधारण जनजीवन विशिष्ट जीवन से भिन्न होता है अत: जनसाहित्य (लोकसाहित्य) का आदर्श विशिष्ट साहित्य से पृथक् होता है। किसी देश अथवा क्षेत्र का लोकसाहित्य वहाँ की आदिकाल से लेकर अब तक की उन सभी प्रवृत्तियों का प्रतीक होता है जो साधारण जनस्वभाव के अंतर्गत आती हैं। इस साहित्य में जनजीवन की सभी प्रकार की भावनाएँ बिना किसी

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

कृत्रिमता के समाई रहती हैं। अत: यदि कहीं की समूची संस्कृति का अध्ययन करना हो तो वहाँ के लोकसाहित्य का विशेष अवलोकन करना पड़ेगा। यह लिपिबद्ध बहुत कम और मौखिक अधिक होता है। वैसे हिंदी लोकसाहित्य को लिपिबद्ध करने का प्रयास इधर कुछ वर्षों से किया जा रहा है और अनेक ग्रंथ भी संपादित रूप में सामने आए हैं किंतु अब भी मौखिक लोकसाहित्य बहुत बड़ी मात्रा में असंगृहीत है। लोक जीवन की जैसी सरलतम , नैसर्गिक अनुभूतिमयी अभिव्यंजना का चित्रण लोकगीतों व लोक-कथाओं में मिलता है , वैसा अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है। लोक-साहित्य में लोक-मानव का हृदय बोलता है। प्रकृति स्वयं गाती-गुनगुनाती है। लोक-साहित्य में निहित सौंदर्य का मूल्यांकन सर्वथा अनुभूतिजन्य है।

लोकाचार -

लोकाचार के अंतर्गत आचार विचार एवं व्यावहारिकता तथा विभिन्न लोकमान्यताओं से संबद्ध साहित्य आता है। आचार-विचार के लिए रचित साहित्य में भावनाओं और मान्यताओं का प्रवेश है किंतु व्यवहार के लिए रचे गए साहित्य में यह बात कम देखने को मिलती है। व्यवहार की विशेषता लोकसाहित्य में मुख्य रूप से देखने को मिलती है। आपसी व्यवहार की बात तो जाने दें। यहाँ साँप को भी दूध पिलाया जाता है। वृक्ष (बरगद, पीपल) को भी बाबा कहा जाता है और बदली तथा नदियाँ बहन का रूप धारण करती हैं। इसी तरह अनेक अमानवीय तत्वों से तथा हिंसक जंतुओं से संबंध जोड़कर सारी सृष्टि को एक रूप में बाँधा गया है। इस संदर्भ में रचे हुए साहित्य का मूल उद्देश्य व्यावहारिकता के आधार पर सरल एवं सुखी जीवन व्यतीत करना है। यही कारण है कि जनजीवन एक रिश्ते में बँधा हुआ है और जातीय भेदभाव , जो भीषण रूप से व्याप्त हैं , उसकी दीवार को तोड़ नहीं सके हैं। दादी दादा , भाई बहन आदि के रिश्ते पूरे गाँव में

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बिना किसी जातीय भेदभाव के चला करते हैं। विभिन्न अवसरों के लिए प्रचलित लोकाचार भी इसी विधा के अंग हैं।

लोक साहित्य का स्थान –

आज के संदर्भ मे उपर्युक्तविवेचन से लोकसाहित्य का स्थान स्पष्ट हो जाता है किंतु धरातल से उठनेवाले इस साहित्य ने अपना एक शीर्षस्थ स्थान भी बनाया है जहाँ उसे वैदिक साहित्य के समकक्ष आसन प्राप्त है। प्रमाण यह है कि हमारे लोकजीवन के बहुत से और विशेषकर सांस्कारिक तथा धार्मिक कार्य वैदिक मंत्रों से पूर्ण होते हैं। जहाँ ये मंत्र संस्कृत में पढ़े जाते हैं वहीं ग्राम्याओं द्वारा गाए जानेवाले लोकगीत तथा लोकाचार पर आधारित अन्य क्रियाकलाप भी चलते रहते हैं। एक ओर पुरोहित मंत्राच्चार करता है तो दूसरी ओर ग्रामीण स्त्रियाँ गीत गाती हैं। मुंडन , कर्णवेध, यज्ञोपवीत तथा विवाह आदि संस्कारों पर और मकान , धर्मशाला, कुंआँ, तालाब तथा पोखर आदि का शुभारंभ करते समय भी मंत्र तथा लोकगीत साथ-साथ चलते हैं। ऐसा एक ही सांस्कारिक एवं धार्मिक तथा परमार्थ का कार्य लोकजीवन में नहीं मिलता जिसमें वैदिक साहित्य के साथ लोकसाहित्य को स्थान न प्राप्त हो। शिक्षा का प्रसार होने के कारण भी गाँवों की बोलियों में गीत गानेवाले पुरुषों एवं स्त्रियों का अभाव होता जा रहा है। ऐसा लग रहा है कि कुछ दिनों में विभिन्न संस्कारों के अवसर पर गाए जानेवाले प्राचीन लोकगीतों का लोप हो जाएगा और उनके स्थान पर नवीन गीत स्थान ले पाएँगे या यदि इच्छा हुई तो लोकसाहित्य के संग्रहों का देख-देख कर पढ़ी लिखी स्त्रियाँ गीत गाकर काम चलाएँगी। इसी तरह वर्तमान युग की घटनाएँ भी इसमें स्वीकार की जा रही हैं। झाँसी की रानी , कुँवर सिंह , गांधी जी , सुभाषचंद्र, भगत सिंह , खुदीराम एवं चंद्रशेखर आजाद आदि

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

लोकसाहित्य में प्रतिष्ठा के साथ जीवित हैं। ये वीर सेनानी उसी कड़ी में जोड़े गए हैं जिनमें प्राचीन काल के वीरों के नाम आते हैं।

निष्कर्ष – लोक साहित्य और संस्कृति हमारे जीवन और मौलिकता का आधार तत्व रहा है। आज प्रदेश और देश में विकास और उत्थान के नाम पर मानवता के पोषण तत्वों के साथ जो खिलवाड़ किया जा रहा है वह मार्ग अशान्ति और विनाश का है । देर सवेर इसको हमें समझना होगा। लोकसाहित्य और संस्कृति केवल गाँव या कृषि चेतना का विषय नहीं है बल्कि उसके द्वारा हम अपनी जीवन शैली और सामाजिक आर्थिक ढाँचे को और ज्यादा मजबूत उदार और समतावादी रूप दे सकते है। भौतिक विज्ञान की सार्थकता इसी बात में निहित होती दिखाई दे रही है। जब हम अनुभूतियों को भी महत्व प्रदान करें और लोकसाहित्य और संस्कृति को हमारी अनुभूतियों को अधिक सक्षम और मजबूत बनाने मे सहायक होगी तब ही हमार साहित्य सुदृढ़ होगा ।तब जीवन में कोमलता प्रेम और पारिवारिकता के लिए लोकसाहित्य को अंगीकार करना आवश्यक होगा। जिससे मानव मात्र के गुणों को विस्तृत करके एक मजबूत समाज का निर्माण किया जा सकेगा । लोक साहित्य और संस्कृति के प्रति हमारी जबाब देही होगी तब ही हम एक अच्छे समाज का निर्माण कर सकते है ।

संदर्भ-

हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य –डॉ शंकर लाल यादव ,हिंदुश्तानी एकेडेमी इलाहबाद ।

पंडित लख्मी चंद ग्रंथवाली –डॉ पूर्ण चंद शर्मा ,हरियाणा साहित्य आकदमी पंचकुला

हरियाणा के लोक गीत –डॉ साधु राम शारदा , हरियाणा साहित्य आकदमी पंचकुला

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 12, December 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

जींद आँचल की लोककथाओं का सांस्कृतिक एव साहित्यिक अध्ययन –डॉ मंगल देव
लाम्बा, हरियाणा साहित्य आकदमी पंचकुला

लोक साहित्य के प्रतिमान –डॉ कुंदन लाल उत्प्रेती ,भारत प्रकाशन मंदिर ,अलीगढ़

हरियाणा सांग का उद्भव और विकास -डॉ राम मेहर ,मनुराज प्रकाशन करनाल

लोक धर्मी नाट्य परंपरा –डॉ श्याम परमार

हरियाणा के संगों में सौंदर्य निरूपण- विजेंद्र सिंह
हरियाणा की सांस्कृतिक शब्दावली का अध्ययन- विष्णु दत्त भारद्वाज
लोक मंच की कहानियां - श्री राजाराम शास्त्री

अध्यक्ष हिन्दी विभाग

दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय,कुरुक्षेत्र विश्वविधालय कुरुक्षेत्र

भारत रत्न पुरस्कार विजेता

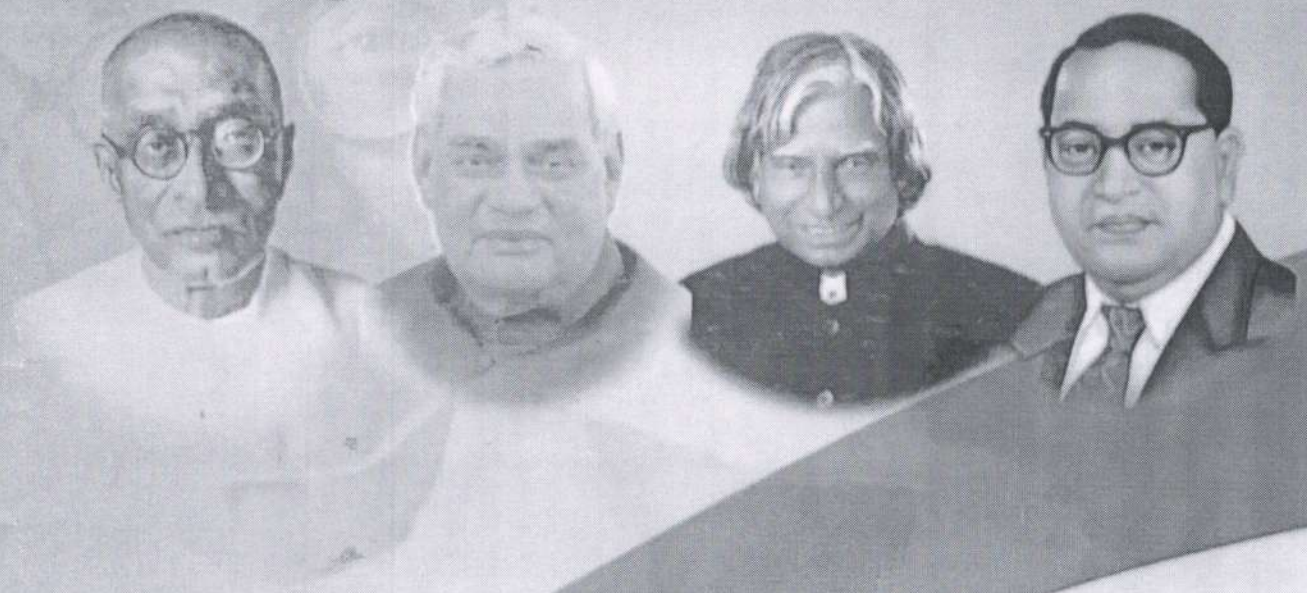

संकलन / संपादक
डॉ. कामराज सिन्धु

संत रविदास और कबीरदास की वाणी का अध्ययन

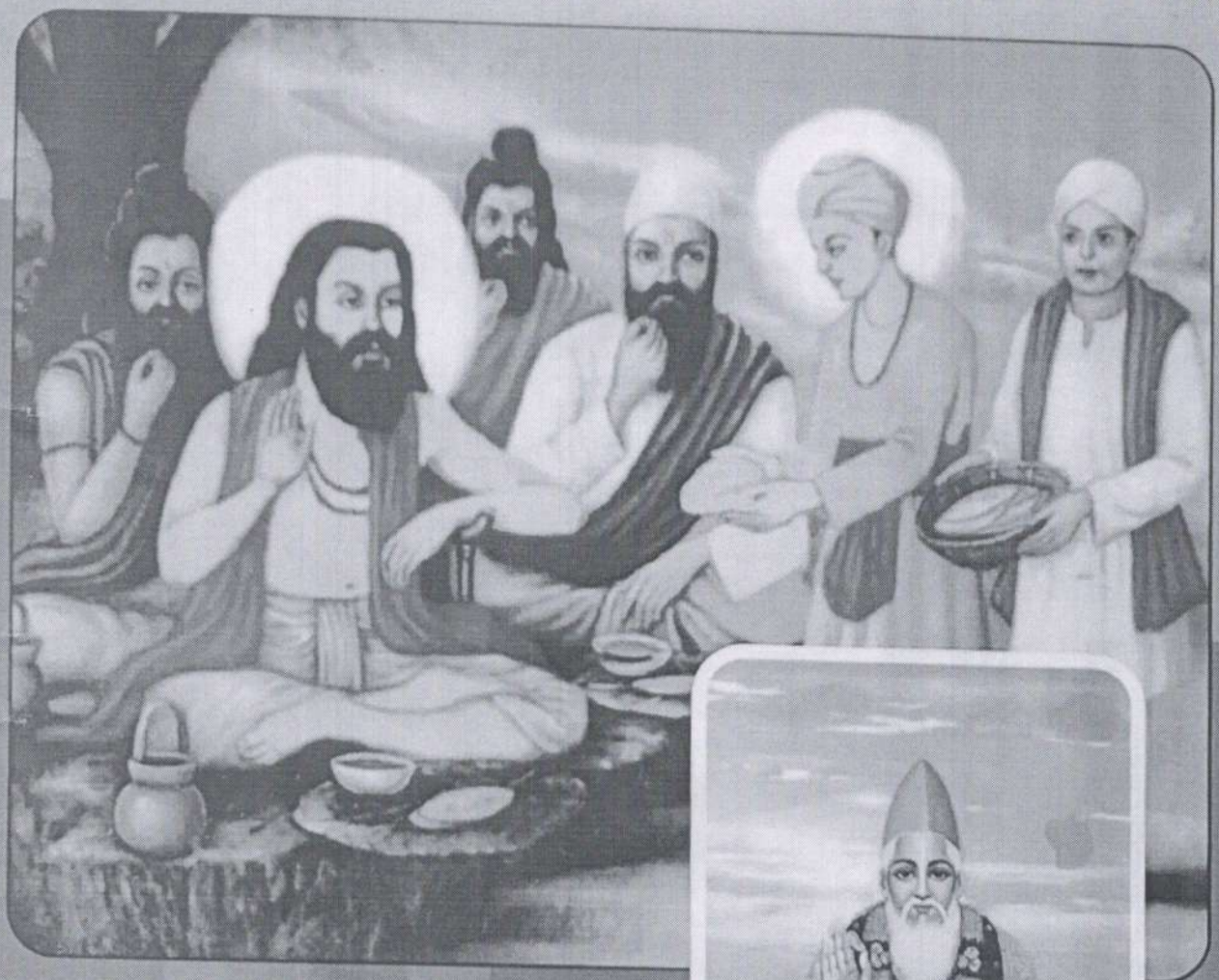

डॉ कामराज सिन्धु

जन्म स्थान : गाँव मेहरड़ा, तहसील जुलाना, जिला-जींद (हरियाणा) **डॉ. कामराज सिंधु**

शिक्षा : बी.ए. (सी.आर. किसान कॉलेज, जींद), एम.ए. (हिन्दी-विभाग, कुरुक्षेत्र विभाग), कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, एम.एस.सी. दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, डीप्लोमा (मीडिया एवं जनसंचार एवं पी.जी.टी.डी. हिन्दी-अंग्रेजी), कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, पी-एच.डी. (हिन्दी विभाग), कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

प्रकाशन : संत रविदास और कबीरदास की वाणी का अध्ययन, अंबेडकर का सामाजिक सरोकार पुस्तक विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में शोध आलेख प्रकाशित व राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ में आलेख प्रस्तुत व शिरकत किया। साहित्यिक दृष्टि से निरंतर हिन्दी साहित्य को आगे बढ़ाने का काम कर रहे हैं।

सम्मान : 'डॉ. अंबेडकर फैलोशिप' (2003), भारतीय दलित साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 'प्रमोद वर्मा स्मृति सम्मान' (2012), 'ताशकंद' (उज्बेकिस्तान), 'प्रमोद वर्मा स्मृति संस्थान', रायपुर (छ.ग.), भारत, 'प्रमोद वर्मा स्मृति सम्मान' (2013), यू.ए.ई, दुबई, 'प्रमोद वर्मा स्मृति संस्थान', रायपुर (छ.ग.) भारत। विश्व हिन्दी संसीन कनाडा द्वारा हिन्दी को समर्पित सेवाओं के आदर स्वरूप 'हिन्दी साहित्यर्थी सम्मान' से नवाजा, 2017 में। मुख्य **संपादक :** 'शोध दर्पण' मासिक पत्रिका का चेयरमैन : ग्लोबल हिन्दी साहित्य शोध संस्थान, भारत।

संप्रति : दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय (हिन्दी विभाग), कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।

संपर्क : 1271 सेक्टर-5, अर्बन इस्टेट, कुरुक्षेत्र, हरियाणा, दूरभाष-09416090378,
इमेल : kamrajsindhu.kuk@gmail.com

संजय प्रकाशन
प्रकाशक एवं वितरक
4378/4 बी, 209 जे.एम.डी. हाऊस अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002
✆ 23245808, 41564415, 9313438740,

₹ 900/-

ISBN 978-93-88107-78-5

सुनो तुम मुझसे वादा करो संपादक : डॉ. कामराज सिंधु डॉ. दीप्ति जोशी गुप्ता

संजय प्रकाशन
4378/4 डी-209, जे.एम.डी. हाऊस
अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
दूरभाष : 23245808, 41564415
मो. : 9313488740
E-mail : sanjayprakashan@yahoo.in

©

ISBN 978-93-88107-78-5

प्रथम संस्करण : 2020

मूल्य : ₹ 900.00

शब्द संयोजन :
हर्ष कंप्यूटर्स
दिल्ली-110086

मुद्रक :
रोशन ऑफसेट प्रिंटर्स
दिल्ली-110053

भूमिका

कहानी केवल रूमानी, इहलौकिक या पारलौकिक कल्पना नहीं होती, कहानी अनेकों बार हमारी अपनी या किसी और के जीवन की आप बीती भी हो सकती है। कहानी कई रूपों से सजी, कई रंगों में रंगी और कई प्रकार की खुशबुओं से लबरेज जिंदगी के उस हिस्से को अपने में समेटे रहती है जिसमें इंसान स्वयं तो झाँक सकता है पर दूसरे को सीधे-सीधे झाँकने की इजाजत नहीं देता। वह कुछ कह देना चाहता है पर यह भी चाहता है कि लोग उसकी अंदरूनी जिंदगी के बारे में कुछ न जानें। "सुनो, तुम मुझसे वादा करो" भी एक ऐसा ही प्रयास है। कहानियों का एक ऐसा पिटारा जिसमें कहानीकारों ने बहुत कुछ कहा है लेकिन बताया कुछ भी नहीं, सब कुछ छिपा लिया।

यदि कहानियों की कहानी की बात करें तो आदिकाल से लेकर आज तक कहानियों का रंग, रूप, आकार बदलता आ रहा है। सीधे-सीधे हिंदवी में कहे गए किस्सों से लेकर आज की हिंदी में लिखी जा रही अल्ट्रामाडर्न कहानियों तक में भाषा, शब्दविन्यास, कथावस्तु, देश-काल-परिस्थितियां, कहानी के प्रारंभन व अंत का तरीका सब कुछ परिवर्तित होता जा रहा है लेकिन नहीं बदली तो कहानी की आत्मा, कहानी की रूह और-कहानी को कहने की मंशा।

डॉ. कामराज का प्रयास "सुनो, तुम मुझसे वादा करो" प्रतीत होता है कि यह वादा कहानीकार से लिया हुआ वादा है कि वो जो कहेगा दिल से कहेगा, सच कहेगा, समाजहित कहेगा और दर्पण के सामने बैठ कर कहेगा।

इस कथासंग्रह के सभी कहानीकारों को बहुत-बहुत बधाई और डॉ. कामराज को जो कि हिंदी भाषा के वैश्विक प्रचार-प्रसार में जी-जीन से रत हैं, को अनेकानेक शुभकामनाएँ इस शुभेच्छा के साथ कि माँ भारती के सम्मान को संवर्धित करता उनका हर प्रयास सफल हो।

धन्यवाद

प्रो. सरन घई
संस्थापक अध्यक्ष
विश्व हिन्दी संस्थान (कनाडा)

भूमिका

वादा और इरादा ये एक-दूसरे के साथ साथ चलते हैं, पहले इरादा फिर वादा, इतिहास से ही लीजिए पृथ्वी राज चौहान, वीर शिवाजी, महारानी लक्ष्मीबाई, हो या महात्मा गाँधी, भगत सिंह, सुभाष चन्द्र बोष, चन्द्र शेखर आजाद, इन सभी ने इरादा किया था और वादा भी किया था खुद से अपने मुल्क से अपने जमीर से सिर्फ आपको और मुझे ही नहीं, सभी को, सैनिक को, अभिनेता को, नेता को, व्यापारी को, अधिकारी को, धर्माधिकारी को ब्रह्मचारी को, विद्यार्थी को, शरणार्थी को, मालिक को, सेवक को, बहन को, भाई को, पिता को, पुत्र को, पति को, पत्नी को, मित्र से अपने चरित्र से, सिर्फ एक इरादा, एक वादा करिये कि हम अपने अधिकार से पहले अपने कर्तव्य पर ज्यादा ध्यान देंगे, फिर खूबसूरत भविष्य और खूबसूरत मंजिल पर पहुँचना तय मानिए, हमारे लिए और हमारी आने वाली नस्लों के लिए...

सुनो तुम मुझसे वादा करो,
काम थोड़ा या ज्यादा करिए
बस पक्का इक इरादा करिए
मिला के रखिए नजरे खुद से
करिए सच्चा इक वादा करिए

कपिल कुमार
बेल्जियम

अनुक्रम

	भूमिका : प्रो. सरन घई		v
	संपादक की कलम से : डॉ. दीप्ति जोशी गुप्ता		vii
	सम्पादक की कलम से : डॉ. कामराज सिन्धु गुरुजी		ix
	भूमिका : कपिल कुमार		xii
1.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*आनन्द वर्धन शर्मा*	15
2.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*आशा पपनै*	18
3.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*अनुराधा अमरनाथ पाण्डेय*	23
4.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*भीम सेन सैनी*	27
5.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*कैप्टन चन्द्रपाल सिंह यादव*	41
6.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*देवेंद्रसिंह सिसौदिया*	47
7.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. दीपा गुप्ता (डॉ. दीपा संजय दीप)*	52
8.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. लक्ष्मण सिंह मनराल*	55
9.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. नीरज अग्रवाल*	61
10.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. शालू सचदेवा*	74
11.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. सुनीता शर्मा*	80
12.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. सुनीता वर्मा*	83
13.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा*	90
14.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. कामराज सिन्धु गुरुजी*	100
15.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*ईशान पथिक*	112
16.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*निशा नंदिनी भारतीय*	125
17.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*डॉ. पूजा रानी*	130
18.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*पुनीत राजा "बेबाक"*	135
19.	सुनो तुम मुझसे वादा करो	*रेनू शर्मा 'शब्द मुखर'*	147